प्रकाशक

चन्द्रशेखर पाठक ।

पाठक एण्ड कम्पनी,

नं० १२।१ चोरबगान लेन,

कलकत्ता ।

यमुनाके स्वच्छ-सलिलमें स्नान कर उसीके तटस्थ मधुवनमें बैठ, हृदयसे क्रोध, घृणा, अपमान तथा प्रतिहिंसा को त्यागकर, ईश्वरगतप्राण हो, तपस्यामें रत रहना। देखना सावधान! वाधाओंसे न डरना, समस्त बाधा-विघ्नको धीर भाव और अविचलित चित्तसे सहन करते रहना। मैं अब चला। इतना कह, नारद भगवानका भजन करते हुए राजा उत्तानपादके राजमहलकी ओर चले गये।

कुछ वक्तव्य ।

प्रिय पाठकगण ! यह मुझे सर्वप्रथम साहित्य-क्षेत्रमें अवतीर्ण होनेका अवसर प्राप्त हुआ है। मैं आज वहुत दिनोंसे एक पुस्तक लिखनेकी चेष्टा कर रहा था, परन्तु कोई उत्तम सुयोग न पानेके कारण मेरा विचार स्थगित ही रहा। अन्तमें, कई एक प्रियमित्रोंके परामर्शसे मैंने "ध्रुवचरित्र" नामक पुस्तक लिखी। वही ले, मैं पाठकोंके सम्मुख उपस्थित हुआ हूँ। इसमें कोई सन्देह नहीं, कि इस पुस्तकमें अनेक अशुद्धियाँ रह गई होंगी। अशुद्धियाँ मनुष्य मात्रसे होती हैं, मैं भी मनुष्य हूँ। मुझसे भूल होना कोई आश्चर्यकी वात नहीं है। इसके अलावा मैं एक नवीन तथा हिन्दी साहित्यानभिज्ञ युवक हूँ, फिर भूल क्यों न हो? इसके अतिरिक्त यह भी कहना उचित समझता हू, कि यदि पाठकगण इसमें कोई त्रुटि: पाते हों :तो लिखनेकी कृपा करें, जिससे मैं अपनी भूल सुधार करते हुए, साहित्यक्षेत्रमें अग्रसर होता रहूँ और जहाँतक हो साहित्य-सेवाकी यथासाध्य चेष्टा करता रहूँ। यदि पाठकोंकी कृपा मुझपर रही तो शीघ्र ही "भक्त प्रह्लाद" नामक पुस्तक ले पुनः साहित्यक्षेत्रमें दीख पड़ूंगा।

क्यों कि पुस्तक लिखनेका सुअवसर इस समय मुझे प्राप्त हुआ है। उपस्थित मैं प्रकाशक महोदयको भी धन्यवाद देनेसे बाज न आऊँगा क्यों कि उन्होंने ही मेरी इस पुस्तक-को प्रकाशित कर मुझे कृतार्थ किया है। आशा है, पाठक-वृन्द इस तुच्छ बुद्धिसे लिखी हुई पुस्तकको स्वीकार कर कृतार्थ करेंगे।

कलकत्ता—
१७ जनवरी १९१६

विनीत—
रामकृष्ण उपासनो

द्वितीय संस्करण।

"भरी है सीनये सोज़ामें आतश इस कद्र ग़मकी।
ठण्डी सांस भी लूं तो मेरे मुँहसे धुआँ निकले।"

पण्डित!

मुझे इस घातकी कदापि आशा नहीं थी, कि हमें इस सन्तप्त हृदय तथा व्याकुल प्राणोंसे, इस पुस्तकके द्वितीय संस्करणपर कुछ लिखना पड़ेगा। ओह! किस उत्साह, किस प्रसन्नता, किस उल्लास और किस असाधारण उद्योगसे तुमने यह पुस्तक लिखी, छपवाई और पुलकित चित्तसे अपनी यह कृति मुझे दी थी! आज उस दिनके स्मरणसे कलेजा फटता है, मन अगाध दुःख-सागरमें निमग्न जाता है, चित्त व्याकुल हो उठता है। कौन जानता था, कि तुम केवल अपनी इक्कीस वर्षकी, परम युवक अवस्थामें, अपने माता पिता, स्त्री, परिजन तथा हमलोगोंको इस अथाह शोक-सागरमें डुबोकर, इस तरह उस लोककी जहाँ तुम्हें देखना हमलोगोंके लिये असम्भव हो जायगा। हा हन्त! कालकी यह कैसी कुटिला गति है, परमात्माकी कैसी दुर्बोध्य लीला है!!

तुम तो हमलोगोंको छोड़ गये और अपनी परम प्रिय कृतिको भी छोड़ गये, तुम्हारे विना यह भी अनाथ होकर ज्यों की त्यों पड़ी थी। क्या यह अच्छा होता? क्या तुम्हारी एक इतनी प्रिय वस्तुको संसारकी दृष्टिसे उठ जाने देना तुम पसन्द करते? लो, इस अपनी चीज़को उसी स्वर्गके नन्दन काननमें बैठकर देखना—इसी उद्देश्यसे यह द्वितीय संस्करण प्रकाशित कर दिया है।

तुम्हारा—

चन्द्रशेखर पाठक।

प्रेमोपहार

बालकोंकी शिक्षाका अपूर्व सुयोग।

बाल-बन्धु-माला।

हिन्दीमें बालकोंको शिक्षा देनेवाली पुस्तकोंकी कमी है। बाल-साहित्य पर लोगोंका कम ध्यान है। इसका असल कारण यह है, कि बाल-साहित्यकी रचना ज़रा कठिन है। इस साहित्यके विषयोंका चुनाव भी सरल नहीं है। इस अभावकी पूर्त्ति होना अत्यावश्यक है। इसीलिये हमने बालकोंकी शिक्षाके लिये बाल-बन्धु-मालाके नामसे एक ऐसी ग्रन्थमाला प्रकाशित करना आरम्भ किया है, जिसमें केवल बालकोंके कामकी पुस्तकें ही प्रकाशित हुआ करेंगी। इसकी भाषा अत्यन्त सरल और बाल-बोध रहेगी तथा इसमें वैसी ही कथाएं, वैसी ही जीवनियाँ, तथा वैसे ही विषयके अन्य ग्रन्थ प्रकाशित होंगे, जिनसे बालक सुमार्गपर लगकर देशके वास्तविक रत्न बनें।

प्रत्येक पुस्तक अनेक चित्रोंसे सुशोभित रहेगी। सबसे बड़ी सुविधा यह है, कि जो महाशय

॥) प्रवेश फी—

भेजकर इसके ग्राहक बन जायँगे, उन्हें प्रत्येक पुस्तक पौनी कीमतमें मिलेगी।

राजर्षि ध्रुव ।
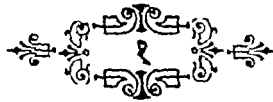
परिचय ।

आजके हजारों वर्ष पहलेकी वात है, उस समय सत्य-युग वीत रहा था—आज कलि-युग वीत रहा है। उस समयकी सभी वातें अचरजभरी, उपदेशभरी तथा धर्म-भरी होती थीं। परन्तु आज उसका ठीक उलटा हो रहा है। उस समयकी वातें अव सपनेकी सम्पदा हो रही हैं। अतः उस पुण्य-कालकी घटनाओंको स्मरण कर आज हमलोग पुनः इस भारतको उसी उन्नत अवस्थापर पहुँचाया चाहते हैं।

उस समय—स्वायम्भुव मनु एक वड़े ही नामी राजा

हुए। उनकी योजन-विस्तृत राजधानी अपनी अनुपम शोभा दिखाती हुई चारों ओर ऊँची प्राचीरोंसे घिरी थी। प्राचीरके तीनो ओर गहरी खाई थी और एक ओर शान्त नदी कलकल ध्वनि करती हुई वह रही थी।

उस राजपुरीकी कोठड़ियोंमें असंख्य पुरवासी, नौकर चाकर, सेवक सेविकाएं रहती थीं। कोई घरका काम करता था, कोई मकान सजाता था और कोई राजकी देखरेख करता था।

राजमहलके सदर दरवाजेपर सुन्दर नौबतखाना बना हुआ था ; जिसमें नित्य सवेरे, सन्ध्या तथा दोपहरको सहनाई वजा करती थी। उसी समय राजमहलमें सङ्गीत होता था। मन्दिरोंसे घण्टेका शब्द और ब्राह्मणोंके मुखसे वेदकी ऋचाओंकी सस्वर ध्वनि सुन पड़तीथी। उस समय राजपुरी आनन्दकी तरङ्ग-मालाओंसे लहरा उठती थी।

इस राजमहलके पीछे जनाना महल भी बना हुआ था। इसमें भी किसी बातका अभाव न था। सुन्दर सुन्दर कमरे, बाग, घाट, तालाव, सभी इस महिला-महलकी शोभाको बढ़ाते थे। तालावमें सदा कमल खिले रहते थे। बागोंसे मनोहर फूलोंकी सुगन्ध आया करती थी और उस

महलमें जड़े हुए बहुमूल्य रत्नोंकी चमकसे वह स्थान सदा उजियाला रहता था।

इन शोभाओंसे भी बढ़कर इस नगरीमें एक अति अपूर्व्व शोभा थी। वह शोभा थी, अपूर्व्व सुन्दरी ललनाओंकी, जो कितने ही राज्योंसे, कितने ही देशोंसे, कितने ही स्थानोंसे आकर इस नगरीमें बसी थीं। इनके सौन्दर्यकी तुलना नहीं की जा सकती थी।

महाप्रतापी स्वायम्भुव मनु जैसे सुन्दर थे, वैसे ही धार्म्मिक तथा दानी भी थे। इनके प्रियव्रत तथा उत्तानपाद नामक दो पुत्र हुए। उत्तानपाद बड़ा सुन्दर तथा हृष्ट-पुष्ट था। उसकी सुकोमल गठन तथा रूप-लावण्य देख, समस्त प्रजामंडली विमोहित रहती थी। स्वायम्भुव-मनुका शासन-काल बड़ा ही उत्तम रहा। उन्होंने प्रजा-पालनमें ऐसा प्रेम दिखाया, कि प्रजा उनको अपने प्राणोंसे बढ़कर चाहती थी। उत्तानपादकी भी यही दशा थी, परन्तु प्रियव्रत दूसरे ही ढंगके थे। अतः अपनी अवस्था ढलती देख, महात्मा स्वायम्भुव-मनुने उत्तानपादको युवराज बना, समस्त राजकार्य्यका भार उसे ही सौंप दिया और अपना शेष जीवन धार्म्मिक कर्म्मों में बितानेके लिये वानप्रस्थ आश्रम ग्रहणकर जंगलमें तपस्या करने चले गये।

उत्तानपादने यौवन प्राप्त करते ही एक अच्छे कुलकी सुनीतिनाम्नी एक अपूर्व्व सुन्दरी कन्याका पाणिग्रहण किया। सुनीति बड़ी गुणवती तथा रूपवती थी। ऐसी सुन्दर स्त्री पाकर उत्तानपाद बड़े आनन्दसे अपना दिन बिताने लगे।

दिनपर दिन बीतने लगे। सुनीतिके व्यवहारसे राजा, प्रजा, दास, दासी तथा नगरनिवासी सभी प्रसन्न हो, उनकी जय मनाने लगे। परन्तु इतना सब होनेपर भी एक दुःख दिन रात उन्हें सताये रहता था। राजमहिषी सन्तान-हीना थीं। आनन्दमें यदि निरानन्दकी कोई बात थी तो एक यही। इसी कारणसे राजारानी दोनों सदा दुःखित रहा करते थे। इन दोनोको दुःखित देख प्रजा भी दुःखित रहा करती थी। यह विषाद दिनपर दिन बढ़ता ही गया। यहाँतक कि राजारानी जब साथ बैठते तब दोनोंमें इसी विषयकी चर्चा होती थी। इसी कारणसे राजभवन नानाप्रकारके आनन्दकी सामग्रियोंसे परिपूर्ण रहनेपर भी, उन दोनोंको श्मशान जैसा उजाड़ मालूम होता था।

सुनीतिकी बुद्धिमत्ता संसारमें प्रसिद्ध थी। इस विषयमे भी उसने अपनी बुद्धिमत्ताका पूरा पूरा परिचय दिया। एकदिन जब राजा रानी एकान्तमें बैठे हुए थे। तब सुनीतिने कहा,—'प्राणनाथ! आप अत्यन्त दुःखित हैं। आपके

दुःखका कारण भी यथेष्ट है। इस ससागरा पृथ्वीके अधी-श्वरका उत्तराधिकारी कोई नहीं? नरनाथ! यदि आप मुझे प्रसन्न करना चाहते हैं, और यदि इस अनुतापकी आगसे मेरी रक्षा करना चाहते हैं, तो मुझे एक वर प्रदान कीजिये। नाथ! मैं आपसे विशेष कुछ नहीं चाहती, धन-रत्न-भाण्डार आपकी कृपासे मुझे यथेष्ट प्राप्त है, परन्तु एक पुत्र-रत्नकी कमीसे यह समस्त राजभवन अँधेरा मालूम हो रहा है। अतएव मुझे अनुमति दीजिये, कि आपके लिये मैं एक गुणवती रूपवती रानीकी खोज करूँ और अपनी एक छोटी बहिनको प्राप्त करनेकी वासना पूर्णकर सुखी होऊँ।'—

उत्तानपादने चकित होकर कहा—'यह क्या प्रिये! यह क्या कहती हो? तुम जैसी गुणवती रूपवती स्त्रीके रहनेपर भी क्या मैं दूसरा विवाह करूँ? यह मेरे किये न होगा। इस बातके सुनते ही मेरी छाती फटने लगती है, और नस नसमें बिजली दौड़ जाती है। इसीलिये कहता हूँ, कि यह बात न कहो।'—

राजाकी बातें सुनकर सुनीतिने अनुरोध करते हुए कहा—'प्राणनाथ! जबतक मैं एक छोटी बहिन न पा लूँगी, तबतक मेरे जीको कल न पड़ेगी। इसलिये मैं बारम्बार

अनुरोध करती हूँ, कि आप अनुमति दीजिये, मैं अपनी वासना पूर्ण करूँ।'

रानीका इतना आग्रह देख, राजा बड़े चिन्तित हुए। वे न हाँ कर सकते थे और न ना। कुछ देरतक सोचनेके बाद, रानीका अत्यन्त आग्रह देख, उन्होंने विवाह करना स्वीकार कर लिया और बोले—"प्रिये! मेरी इच्छा विवाह करनेकी नहीं है, परन्तु यदि तुम्हारा इतना आग्रह है, तो तुम्हारी इच्छा पूर्ण करनेके लिये मैं तय्यार हूँ।"

राजाकी बात सुन, सुनीति परम प्रसन्न हुई। उसने अपनी दासीको बुलाकर कहा,—"राज-मंत्री सुयशको बुला लाओ। राजा एक और विवाह करेंगे। एक सुयोग्य कन्याकी खोजमें भेजना है।"

यह घटना कानोंकान समस्त प्रजामंडलीमें फैल गयी। रानीके अद्भुत स्वार्थत्यागकी प्रशंसा चारों ओर होने लगी। मंत्री सुयशके आनेपर रानी सुनीतिने कहा—"सुयश! आज तुम्हें एक अत्यन्त गुरुतर कार्य्यका भार सौंपती हूँ। वह यह है, कि तुम राजाके लिये एक बहुत सुन्दर, गुणवती और अच्छे कुलकी कन्याके अनुसन्धानमें शीघ्र दूत भेजो।"

रानीकी बात सुनकर सुयश कहने लगे—"देवि! यह क्या? आज आप दूसरी महिषीको लानेकी आज्ञा देती हैं।

परन्तु कुछ समय बाद ही आपके सुखमें बाधा पड़ेगी। अतएव आप ऐसा काम न करें।"

रानीने कहा—"सुयश, तुम जानते नहीं, कि इस तरह जीवन बितानेसे वंश-रक्षा न होगी। मेरा भविष्य सुख नष्ट हो जाये, इसकी चिन्ता नहीं है। परन्तु मैं वंशकी रक्षा जिस तरहसे हो, करनेसे मुँह न मोड़ूँगी। देखते नहीं, महाराज सदा दुःखित रहा करते हैं। यदि उनका एक विवाह और हो जाय तो, यह चिन्ता भी उनके हृदयसे दूर हो जायगी। मैं भी राज-कुमारका मुख देखकर प्रसन्न होऊँगी और राजा भी आनन्दसे जीवन बिताने लगेंगे। अतएव, जाओ, विलम्ब न करो।"

रानी सुनीतिका निर्वासन।

स्वयश प्रणाम कर, रानीकी प्रसंशा करते हुए कन्याकी खोजमें चले। वह जानते थे, कि रानी सुनीतिकी आज्ञा कोई टाल नहीं सकता। अतः उन्होंने सुरुचि नामकी अत्यन्त रूपवती और उत्तम कुलकी एक कन्या अति परिश्रमसे खोज निकाली और उसीके साथ राजा उत्तानपादने शुभ लग्न तथा शुभ मुहूर्त्तमें विवाह किया। विवाहके दिन राज-भवनकी शोभा अतीव मनोहर हो रही थी। राज-भवनमें हीरा तथा बहुमूल्य जवाहिरातोंसे बिना रोशनीके ही उजियाला हो रहा था। भवनका ऊपरवाला भाग नाना रङ्गके चित्रोंसे चित्रित था।

इस नयी रानीका रूप लावण्य जो कोई देखता था, वही विस्मित होकर कहता था, कि निःसन्देह यह कोई स्वर्गकी

अप्सरा है। नहीं तो ऐसी सुकोमल गठन और इतना मनोहर तथा सुन्दर रूप मनुष्योंमें नहीं होता।

ज्यों ज्यों समय बीतता गया; त्यों त्यों उत्तानपाद इस नवीन रूपवती रानीके रूप-लावण्यमें मुग्ध हो, रानी सुनीतिकी अपेक्षा उसे अधिकतर प्यार करने लगे। रानी सुनीतिने यह देखकर भी अनदेखी कर दिया। वे अपने पाति-व्रत धर्म्म-पालनमें तत्पर हो, राजाकी सेवा उसी प्रकार करती रहीं, जैसी पहिले करती थीं।

सुरुचि सुन्दरी होनेपर भी कुटिल-हृदया थी। राजाको अपने ऊपर आसक्त देख, वह अपनी सौतका पतन सोचने लगी। उसने मन-ही-मन विचारा—"जबतक रानी सुनीति रहेगी, तब तक राजापर मेरा पूर्ण अधिकार न होगा। चाहे जिस तरह हो, इसे यहाँसे निकालना ही पड़ेगा। राजाके यहाँ इसका रहना मुझे बड़ा ही कष्टकर प्रतीत होता है।"

सुरुचिकी एक दासी थी—कुटिला। यह कैकेयीकी रानी मन्थरा जैसी ही थी। इसने अपने नामके अनुसार ही गुण भी पाया था। अतः रानीने उसे बुलाकर अपने मनकी बात कही। सोनेमें सोहागा मिल गया। कुटिलाने अपना कुटिलपन दिखाना आरम्भ किया। उसने छोटी रानीकी प्रियपात्री बननेके लिये, बड़ी रानीके विरुद्ध अपनी वाक्-

चातुरी दिखानी प्रारम्भ की। छोटी रानीके खूब कान भरते हुए उसने कहा—"रानी! यदि आप रानी सुनीतिको निकालना चाहती हैं, तो मेरे कहे अनुसार आप मुंह उदास बनाकर राजाके पास एक दिन जा बैठिये। वे पूछें कि यह क्या रानी? आप इतनी उदास क्यों हैं? तब आप उत्तर देना, कि रानी सुनीतिके विरुद्ध नाना प्रकारकी बातें मैंने सुनी हैं; सुनकर मेरी तबीयत बड़ी उदास हुई। उसी दिनसे मैं बड़ी चिन्तित रहती हूँ। राजपरिवारमें ऐसी कलंककी बात होना बड़े आश्चर्य्यकी बात है।" पहले तो सुरुचिका इतना साहस न हुआ, परन्तु अन्तमें उसने कुटिलाकी बात मान ली। उसने सुनीतिके विरुद्धकी बहुतसी बातें राजासे कहीं। बड़ी रानीकी कलंक-कथा सुन राजा चकितसे रह गये। वे समझ न सकते थे, कि यह कैसी बात है। इधर छोटी रानीने भी राजाके कान खूब भरे और नाना प्रकारके झूठे उपायोंसे बड़ी रानीके व्यभिचारको प्रमाणित कर दिया। यहाँ तक, कि एक दिन राजा अति विरक्त हो छोटी रानीसे परामर्श लेने लगे, कि इस विषयमें क्या करना चाहिये। रानी सुरुचिने अपनी कामना पूर्तिका उपयुक्त अवसर देख, उन्हें अपने मायाजालमें पूरी तरह फांस, बड़ी रानीको निर्व्वासनकी आज्ञा दिला दी। उसी समय प्रधान मन्त्रीको

राजर्षि ध्रुव सचित्र पौराणिक उपाख्यान ।

लेखक—रामकृष्ण उपासनी ।

हाहाकार करती हुई प्रजामंडली भी उनके पीछे पीछे चली। रानीने एक एक कर सबको समझा बुझाकर विदा किया। इतनेमें ही सघन वन आ गया। मन्त्रीने रानीको रथसे उतार कर कहा—'मेरा अपराध क्षमा कीजिये, दासने राजाकी आज्ञा पालन की है।" सारथीने भी साष्टांग प्रणाम किया और अपराधके लिये क्षमा प्रार्थना की। रानीने शान्त चित्तसे इन दोनोंको सान्त्वना देकर विदा किया। परन्तु मधुमती नामकी सहचरी जो रानीके साथ आई थी, उसने रानीसे विलग न होनेका हठ कर, उसका साथ न छोड़ा।

लोगोंकी खबर कौन लेगा ? हम लोगोंके दुःख सुखका साथी कौन होगा ?

इधर सुनीतिकी दशा दूसरी ही हैं, वे सोच रही हैं —"क्या हमारे भाग्यमें यही लिखा था कि मैं कलंकिनी कहलाकर वन-वासिनी बनाई जाऊँ ? हा देव ! जो तेरी इच्छा है, वह अवश्य होगा। जिसमें तू प्रसन्न है, उसीमें मैं भी प्रसन्न हूं।" इधर दासियाँ अलग ही विलाप कर रही थीं और रानीको भांति भांतिके उदाहरणोंसे समझा रही थीं, कि सत्यकी ही सदा जय होती है, मिथ्याकी नहीं। रानीकी प्रिय सहचरी लक्ष्मी कहने लगी "माता ! यह तुम्हारी परीक्षा है, इस परीक्षामें विजय पाना तुम सरीखी सत्यवती साध्वियोंका ही काम है।"

इधर थर थर काँपते हुए आँखोंमें आँसूभरे वृद्ध मन्त्री राजद्वार पर आ खड़े हुए। भीतरसे सुनीति भी रोती हुई आईं। हाहाकार करती हुई दासियाँ उनके पीछे पीछे निकलीं। वृद्ध मन्त्रीने साष्टांग प्रणाम कर कहा—"देवि ! मेरा कोई अपराध नहीं। मैं राजाकी आज्ञाके अधीन होकर आज आपको वन ले जाने के लिये आया हूं। आप कृपया चलिये।"

इधर जैसे ही रानीको लेकर रथ आगे बढ़ा, वैसे ही

हाहाकार करती हुई प्रजामंडली भी उनके पीछे पीछे चली। रानीने एक एक कर सबको समझा बुझाकर विदा किया। इतनेमें ही सघन वन आ गया। मन्त्रीने रानीको रथसे उतार कर कहा—'मेरा अपराध क्षमा कीजिये, दासने राजाकी आज्ञा पालन की है।" सारथीने भी साष्टांग प्रणाम किया और अपराधके लिये क्षमा प्रार्थना की। रानीने शान्त चित्तसे इन दोनोंको सान्त्वना देकर विदा किया। परन्तु मधुमती नामकी सहचरी जो रानीके साथ आई थी, उसने रानीसे विलग न होनेका हठ कर, उसका साथ न छोड़ा।

३

ध्रुवका जन्म।

स्वामी तथा मन्त्रीसे विदा हो, रानी सुनीति, मधुमती की सहायतासे एक कुटी बना कर अपना दुःखमय जीवन बिताने लगीं। एक दिन वे अत्यन्त दुःखित होकर कहने लगीं,—संसारकी विचित्र लीला है, इस सत्सागरा वसुन्धरामें ईश्वरीय लीला ही एक देखने योग्य सामग्री है। मैं जिसका उपकार करती हूँ, वही मेरा अपकार करनेको तय्यार रहता है। मैं रानी सुरुचिका कितना आदर, सत्कार और प्यार करती थी, अपने साथ खिलाती, अपने हाथोंसे उसका केश-विन्यास करती, उसे किसी बातका कष्ट न हो—सदा इसपर ध्यान रखती थी, परन्तु हाय! उसका ठीक विपरीत फल हुआ। उसने यद्यपि मेरी इतनी बुराइयाँकी और मुझे कलंकिनी बना कर इस अवस्था तक पहुँचाया, परन्तु इसके लिये मैं

तनिक भी दुःखित नहीं। परन्तु हाँ! उसके लिये न जाने क्यों मेरा चित्त कभी कभी घबड़ा उठता है। ईश्वर उसका मंगल करें।"

कुछ दिन बीतनेपर एक दिन राजा उत्तानपाद दो चार अनुचरोंके साथ शिकार खेलनेके लिये गये। घने जङ्गलमें ही सन्ध्या हो गयी। अँधेरा छा गया, साथी इधर उधर बिछुड़ गये उन्हें एक पग चलना भी भारी हो गया। वे घोड़ेसे उतर किसी आश्रयस्थानको खोजमें भटकने लगे। कुछ दूर आगे जानेपर एक कुटी देख पड़ी। जिसे देख, उनकी जानमें जान आयी! वे कुटीके निकट जाकर दरवाजा खट-खटाने लगे। भीतरसे किसीने बड़े ही कातर स्वरमें पूछा—"आप कौन हैं? इतनी रातको यहां क्यों आये हैं?"

राजाने कहा—"मैं उत्तानपाद हूँ! मृगयाके लिये आया था। रात्रि हो जानेके कारण आश्रयस्थानके लिये भटकता हुआ, यहाँ आ पहुँचा हूँ।"

यह रानी सुनीति थीं। राजा उत्तानपादका नाम सुनते ही वे किंकर्त्तव्यविमूढ़ा सी खड़ी रहीं। उनकी नस नसमे बिजली दौड़ने लगी, कुछ क्षण ठहर कर उन्होंने किवाड़ खोल दिये।

राजा उत्तानपाद भीतर गये। रानी उन्हें आसनपर बैठा-

कर चरण धोने लगीं। यह देखकर राजा बोले—"यह क्या करती हो? तुम वनविहारिणी संन्यासिनी होकर मेरे चरण धोती हो। मैं न धोने दूंगा।"

इतना सुनते ही रानीके हृदयका दु:ख और भी उमड़ पड़ा। उनकी आँखोंसे आँसुओंकी धारा बहने लगी। यह देख राजाके मनमें कुछ सन्देह हुआ। वे ध्यानसे कुछ देरतक रानीकी ओर देखते रहे। देखते-देखते बोले "यह क्या! रानी सुनीति! तुम यहाँ हो! क्षमा करो, मैंने धोखा खाया। रानी सुरुचिके मायाजालमें फँसकर तुम्हें वनवासिनी बनाया, मेरा अपराध क्षमा करो।"

राजाको शान्त करते हुए रानीने कहा—"यह क्या महाराज! आप मुझसे क्षमा प्रार्थना करते हैं। आज मेरा परम सौभाग्य है, कि आपके चन्द्रमुखका दर्शन तो हुआ।"

राजाने कहा—"मैंने यद्यपि अपराध किया है, तथापि मैं अपराधी नहीं हूं। रानी सुरुचिने इस तरह अपना जाल फैलाया, कि मेरा ज्ञान लोप हो गया था। परन्तु अब जो विचार कर देखता हूं, तो स्पष्ट ही मालूम होता है, कि तुम निरपराधिनी हो।"

रानी—बीती बातोंका विचारना वृथा है। जो हो गया उसे भूल जाइये, अब उठिये, भोजन आदि कीजिये।"

महाराज उत्तानपाद रानीकी इस नम्रतासे और भी प्रसन्न हुए। रानीने बड़े आदरसे उनका चरण धो, कपड़े बदलवा, उन्हें भोजन कराया। भूखे प्यासे उत्तानपाद रानीके कपट-रहित व्यवहारसे बड़े ही सन्तुष्ट हुए। भोजन इत्यादिसे निश्चिन्त हो, राजा आनन्दसे वहीं सो गये। रात्रि वहीं बिताकर सवेरे फिर राजधानीकी ओर चले गये। परन्तु रानी सुरुचिके भयसे सुनीतिको साथ ले जानेका उनको साहस नहीं हुआ।

कालकी भी क्या गति है। उसी दिन रानी सुनीति गर्भिणी हुईं। मधुमती तथा अन्यान्य ऋषिपत्नियोंके आनन्दकी सीमा न रही। वे बड़े यत्नसे सती-साध्वी रानी सुनीतिकी सेवा करने लगीं। दश मास बीतनेपर रानीने एक अपूर्व रूपलावण्यशाली पुत्र-रत्न प्रसव किया। इस पुत्रको देख, ऋषियोंने नाना तर्क वितर्कके बाद स्थिर किया कि स्वयं नारायण इस संसारमें अवतीर्ण हुए हैं। इसी समय रानी सुरुचिको भी एक पुत्र हुआ, जिसका नाम उत्तम रखा गया।

नामकरण भी हो गया। सुनीतिके पुत्र नाम "ध्रुव" रक्खा गया। आज यदि यह पुत्र किसी राजभवनमें उत्पन्न हुआ होता तो क्या आज अभ्यागतों का केवल फल-मूलोंसे

ही सत्कार किया जाता ? चारों ओर नौवत, गाना-वजाना तथा आनन्दोत्सव आदिसे राजधानीमें आनन्दका महासागर उमड़ पड़ता। परन्तु दुःखकी वात है, कि आज अभ्यागतोंका केवल फल-फूलोंसे ही सत्कार किया गया। रानीके हृदयमें इन वातोंका क्लेश क्यों न हो ?

ध्रुव दिन पर दिन वढ़ने लगा। वनमें रहनेके कारण वह भी ऋषिकुमारसा दीख पड़ने लगा। इसी तरह वहुत दिन वीत गये। एक दिन कई ऋषिकुमारोंके साथ वह रानी सुनीतिके आज्ञानुसार राजा उत्तानपादके यहाँ जा पहुँचा !

ध्रुवको साथ लिये जव ऋषिकुमार राज-दरवारमें पहुँचे, तो उनके आनन्दकी सीमा न रही। राजा उत्तानपादके दरवारकी सजधजका कोई वारापार न था। दरवार वहुतेरे रमणीय तथा मूल्यवान पदार्थोंसे सजाया हुआ था। एक ओर नाना भांतिके मणिमाणिक्योंसे जटित राजाका सिंहासन स्थापित था। उसपर रतिपति मदनकी भांति स्वयं राजाधिराज उत्तानपाद विराजमान थे। उनसे नीचेकी ओर एक सोनेकी कुर्सीपर राजाके वृद्ध मन्त्री वैठे हुए थे। फिर उसी पंक्तिमें नाना प्रकारके सुवर्ण, रौप्य तथा रत्नजटित कुर्सियोंपर एकसे एक वलशाली, धन-सम्पन्न सामन्त राजागण अपनी अपनी मर्यादाके अनुसार आसीन थे। इसी समय ऋषि-

कुमारोंके साथ वनवासी वेश बनाये, फूलोंसे ही अपना शृंगार किये, राजा उत्तानपादकी प्रधाना महिषी सुनीतिका प्यारा ध्रुव भी वहाँ जा पहुँचा ।

ध्रुव सहित ऋषिकुमारोंको देखकर स्वयं राजाने उठकर उन लोगोंका स्वागत किया और सुन्दर सुन्दर आसन उनको बैठनेके लिये दिये । एकाएक उनकी दृष्टि ध्रुवपर आकर्षित हो पड़ी । ध्रुवको देखते ही वे चंचल हो उठे । राजा के हृदयमें ममताने कुछ ऐसा प्रभाव जमाया कि उस भावको बहुत तरहसे छिपानेकी चेष्टा करनेपर भी वे सफल न हो सके । वनवासिता प्रियाके मुखका भाव ध्रुवके मुखपर वर्त्तमान देख, वे स्थिर न रह सके । उन्होंने पूछा,—"बेटा तू किसका पुत्र है ?"

ध्रुवने कहा—"मैं एक अनाथिनी वनवासिनीका पुत्र हूँ ।"

अब क्या था । यह सुन, राजा ध्रुवको गोदमें बैठा, प्यार करने लगे । सभासदोंको जब यह समाचार मालूम हुआ तब वे भी ध्रुवको प्यार करने लगे । उत्तम सिंहासनके एक ओर खड़ा रहा । राजाको ध्रुवको प्यार करते तथा गोद-में बैठाते देखकर उसके हृदयमें ईर्षा की आग जल उठी । वह मौन धारण किये मुँह लटकाये चुपचाप एक ओर खड़ा रहा ।

इसी समय रानी सुरुचि वहाँ आयीं। एक वालकको राजाकी गोदमें और अपने पुत्र उत्तमको नीचे खड़ा देखकर उनके आश्चर्य्यकी सीमा न रही। वे दरवारमें आकर राजासे इसका कारण पूछने लगीं। राजाने वड़े ही नम्र शब्दोंमें ध्रुवका सारा हाल कह सुनाया। सुनते ही सुनीतिके क्रोधकी सीमा न रही। उसने ध्रुवको ललकारते हुए कहा—"तू आज किस साहसपर राजाकी गोदमें वैठा है? तू जानता नहीं कि तू एक कलंकिनी व्यभिचारिणीका पुत्र है। उतर जा! ऐसी अभिलाषा भविष्यमें न करना। उत्तम मेरा पुत्र है, राज-गोद ही नहीं, वह नाना रत्नोंसे जटित राज-सिंहासनका अधिकारी होगा। आज यदि तू मेरा पुत्र होता तो निःसन्देह तू भी यह आशा कर सकता था। सावधान! यदि भविष्यमें मैं तुझे फिर ऐसी ढिठाई करते देखूँगी तो कठोर दण्ड दूँगी।"

रानीका हृदयविदारक कठोर तिरस्कार सुन कर ध्रुव राजाकी गोदसे उतर पड़ा। अपमान तथा दुःखके कारण मस्तक अवनत किये हुए खड़ा रहा। राजदरवारमें वड़ी हलचल मच गयी। समस्त प्रजामण्डली कहने लगी—"रानीको एक निरपराधी वालकका अपमान तथा तिरस्कार करना उचित न था।" ऋषिकुमार ध्रुवको तिरस्कृत तथा

अपमानित देखकर कहने लगे—"भाई ! चलो, हमलोग चल, जहाँ हमलोगोंका अपमान होता है, वहाँ हमलोगोंको एक क्षण भी नहीं ठहरना चाहिये ।"

राजा उत्तानपादने कहा—"नहीं, ठहर जाओ, अभी न जाओ ।" परन्तु उनकी बातपर किसीने कान न दिया । ऋषिकुमार ध्रुवको लिये हुए राजदरबार त्याग, वनकी ओर चले गये ।

ध्रुवका गृह-त्याग ।
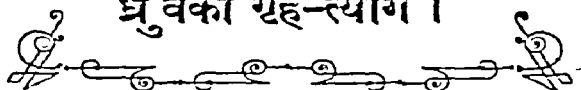
रानी सुनीति ध्रुवकी बाट जोह रही हैं। परन्तु अबतक ध्रुव न आया। क्रमागत उनकी उद्विग्नता बढ़ती ही गयी। वे कुटीसे बाहर निकल चारों ओर निगाह दौड़ाने लगीं। कुछ देरके बाद ध्रुव मस्तक अवनत किये हुए आता देख पड़ा। आज उसका सुन्दर मुख मुर्झाया हुआ था। ध्रुवका दुःख-घृणायुक्त मुख देखकर रानी सुनीतिने पूछा—"बेटा! तू आज इतना उदास क्यों है? इस तरह क्यों खड़ा है? न बोलता है, न हँसता है, ऐसा क्यों? आज तुझे क्या हुआ है?"

माताकी स्नेहभरी बातें सुन ध्रुव और भी दुःखित होकर रोने लगा। रानीने पूछा—"लाल! बोलता नहीं, कौन ऐसा पापी इस धरामें है, जो तुझे कष्ट दे नरकगामी होनेका

दोषी हुआ है? बोल, बेटा! अभी मैं उससे प्रतिशोध लेती हूं।"

अब ध्रुवसे शान्त न रह गया। वह रोता हुआ बोला—"मा! आज मैं राजा उत्तानपादके दरबारमें गया था। राजाने मुझे बहुत प्यार किया। मेरा बड़ा ही आदर किया। परन्तु रानी सुरुचिने मुझे तिरस्कार करते हुए कहा,—ध्रुव! तू आज किस साहससे राजाकी गोदमें बैठा है? जानता नहीं, कि उस स्थानका अधिकारी मेरा हृदयरत्न उत्तम है। तू तो एक निर्वासिनी कलंकिनीके गर्भसे पैदा हुआ है। अतएव तुझे राजाकी गोदमें बैठनेका कोई अधिकार नहीं है। उत्तम मेरा पुत्र है। अतएव उस स्थानका प्रकृत अधिकारी वही है।' इतना सुनते ही मैं राजाकी गोदसे उतर गया।"

सुनीतिने कहा,—"पुत्र! वास्तवमें तू वनवासिनीका हृदय-रत्न है। सुरुचि रानी है और मैं राजा उत्तानपादकी स्त्री होनेपर भी उस रानीकी दासी हूँ। उत्तम राजपुत्र है, इस समय राज-गोदका वही प्रकृत अधिकारी है।" यह कहती कहती रानी सुनीति भरो पड़ीं।

ध्रुवने कहा—"माता! न मैं राजगोद चाहता हूँ, न राजसिंहासन चाहता हूँ। मैं ऐसे स्थानका अधिकारी होना चाहता हूँ, जो इन दोनो स्थानोंसे श्रेष्ठतर हो।"

रानी सुनीतिने कहा,—"बेटा! ईश्वरका ध्यान कर। वे ही तुझे तेरे अभिलषित स्थानमें पहुँचा देंगे, क्योंकि वे जगत्पिता जगदीश्वर निराश्रयके आश्रयदाता हैं, दीन तथा दुःखीके सहायक तथा दुःखहर्ता हैं।"

रानी सुनीतिका उपदेश सुनकर ध्रुव कुछ शान्त हुआ। उस दिनसे वह ईश्वरके ही ध्यानमें मग्न रहने लगा। उसने स्थिर कर लिया, कि इस संसारमें प्रथम माता, द्वितीय सृष्टिकर्त्ता, सर्व्वशक्तिमान् ईश्वरके भिन्न और कोई उसका सहायक नहीं है। उसी दिनसे ध्रुवकी आँखोंमें नींद नहीं थी!

एक दिन, अर्द्ध रात्रिके समय, जब रानी सुनीति अपने एक मात्र हृदयरत्न ध्रुवको गोदमें लिये सो रही थीं कि ध्रुव स्नेहमयी माताको सोयी हुई देखकर उठ खड़ा हुआ। माताके मुखकी ओर देख, मन-ही-मन कहने लगा,—"हाय! कैसे अपनी माताको छोड़, ईश्वरके ध्यानके लिये जाऊँ? हाय! मा जब मुझे नहीं देख पावेंगी, तब वे कितनी दुःखित होंगी! पगलीकी भांति चारों ओर दौड़ने लगेंगी।" फिर दरवाजेकी तरफ अग्रसर हो, पुनः माके पास लौट आया और मन-ही-मन कहने लगा—"हे मा! तुझे छोड़कर मैं कैसे जाऊँ? मैं तुम्हारी आँखोंका तारा हूँ, हृदयका निधि हूँ—क्या करूँ? विमाताका तिरस्कार अब भी मेरे हृदममें तीर सा

ध्रुवका गृहत्याग ।

[देखिये, पृष्ठ सं० २५

चुभ रहा है। तुम्हींने कहा था, कि ईश्वरका दर्शन करनेसे वह दुःख दूर होगा। इसीलिये मा मैं चला।"

ध्रुव किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो, कुछ देरतक खड़ा रहा। वह कुछ स्थिर न कर सका, कि क्या करना चाहिये। एक ओर मातृस्नेह दूसरी ओर ईश्वरभक्ति—दोनों ही की खींचातानीके मध्यमें ध्रुव खड़ा रहा। परन्तु अन्तमें ध्रुव पर ईश्वरकी भक्तिने ही अधिक प्रभाव जमाया। वह माताको उसी अवस्थामें त्याग कर—"हे प्रभो, तू कहाँ है? अब मेरा दुःख दूर कर।" कहता हुआ माताको प्रणामकर, कुटीसे वाहर निकल, गहन वनमें प्रवेश करने लगा।

उस समयका दृश्य ध्रुवके लिये वड़ा ही भयंकर हो रहा था। चारो दिशायें वृक्ष लतादिसे परिपूर्ण थीं। वीच वीचमें सियार, कुत्ते तथा अन्यान्य जंगली जानवरोंके भीषण चीत्कारकी ध्वनि सुन पड़ती थी। परन्तु ध्रुव इन सब वाधाओंसे विचलित न होकर, ईश्वरके ध्यानमें मग्न रहता हुआ, वरावर अग्रसर होने लगा।

इसी प्रकार कुछ दूर जाने पर उसे सप्तऋषियोंका दर्शन हुआ। इतनी छोटी अवस्थामें उसे वन वन फिरते देख, वे विस्मित होकर पूछने लगे—"वेटा! तू कौन है? और किस प्रयोजनसे कहाँ जा रहा है?"

ऋषियोंकी बात सुनकर ध्रुवने कहा,—"ऋषिवर ! मैं एक वनवासिनी, दुःखिनी तथा अनाथिनीका पुत्र हूँ । एक दिन सौतेली माताने बड़े ही कठोर शब्दोंमें मेरा तिरस्कार किया है । मैं पिताकी गोदसे उतार दिया गया हूँ । मेरी माता वनमें घोर दुःख भोग रही हैं । इसीलिये मैं अनाथोंके नाथ, दीनोंके एकमात्र सहायक, सर्वशक्तिमान, सृष्टिकर्त्ताका दर्शन करनेके लिये जा रहा हूँ ।"

ध्रुवकी एकान्त ईश्वर भक्ति देख, ऋषिगण पूछने लगे, "बेटा ! तेरी क्या अभिलाषा है, जिसे पूर्ण करनेके लिये तू इस लड़कपनका खेल-कूद तथा सांसारिक समस्त सुख त्यागकर इस बाल्यावस्थामें ही ईश्वर भजनके लिये जा रहा है ?"

ध्रुवने उत्तर दिया,—"महात्मन् ! मैं राजा उत्तानपादका पुत्र ध्रुव हूँ । विमाता द्वारा व्यभिचारिणी कहलानेके कारण तथा उनके मायाजालमें सम्पूर्ण प्रकारसे मुग्ध हो, पिताने मेरी स्नेहमयी जननीको बिना विचारे निर्वासित कर दिया । उसी वनमें मैं उत्पन्न हुआ हूँ । अतएव मेरी विमाताके कथनानुसार मैं निर्व्वासिनी सुनीतिके गर्भसे पैदा होनेके कारण, राजसिंहासन यहाँतक कि पिताकी राज-गोदपर भी बैठनेका अधिकारी नहीं हूँ । उनके तिरस्कारने

मेरे हृदयमें बड़ी ही कठोर चोट पहुँचायी है। अतएव, मैं समस्त सांसारिक सुख, यहाँतककी मातृस्नेहको भी त्यागकर, एक ऐसे स्थानका प्रार्थी हुआ हूँ, जो राजगोद या राजसिंहासनसे भी श्रेष्ठतर हो। इसी अभिलाषाकी पूर्त्तिके लिये मैं जगदीश्वरका दर्शनके लिये जा रहा हूँ। उनका दर्शन होनेपर अपनी अतीत दुःख कहानी उनको सुना, उस स्थानपर अधिकारके लिये प्रार्थना करूँगा।" इतना कहकर वह रोने लगा।

ध्रुवकी बात सुन ऋषियोंके आश्चर्य्यका ठिकाना न रहा। वे कहने लगे—"ध्रुव! निःसन्देह वे तेरी अभिलाषा पूर्ण करेंगे। वे निराश्रयके आश्रयदाता तथा दुःखियोंके दुःखहर्ता हैं। हमलोग आशीर्वाद देते हैं, कि तू अपनी साधनामें सफल हो। ईश्वर तेरा मंगल करें।" इतना कह, वे एक ओर चले गये। ध्रुव फिर आगे बढ़ा।

ध्रुव ईश्वरका नाम लेता हुआ एक अति रमणीय स्थानमें जा पहुँचा। वह स्थान उसे बड़ा ही सुन्दर तथा शोभामय मालूम होने लगा। उस स्थानपर एक बड़े वृक्षके नीचे बैठकर वह ईश्वरका नाम जपने लगा। भयंकर निनाद करते हुए वन्य पशु चारों ओरसे वहाँ आ पहुँचे और ध्रुवको घेरकर बैठ गये।

५
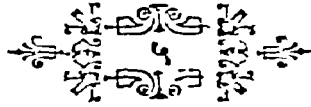
दुःखिनी सुनीति।

पाठक ! आइये, अब रानी सुनीतिके जीवन नाटकका भी दृश्य देखिये। हाय! आज प्रातःकालसे उनके दुःखमय जीवनकी यवनिका उठ गई। एक तो वनवासिनी अनाथिनी होकर वे दुःखमें पड़ी हुई थीं ही, पर उनके दुःखका जो एकमात्र साझीदार था, उसने भी आज उनका साथ छोड़ दिया। आज उनका एक मात्र जीवनाधार, आँखोंका तारा, हृदयका रत्न खो गया। यद्यपि वे स्वामीसुखसे वञ्चित हो गई थीं, यद्यपि उनके लिये राजमहलका सुख सपना हो रहा था, तथापि उनके पास जो एक अमूल्य रत्न था, उसीको लेकर वे सन्तुष्ट रहती थीं।

परन्तु उस सर्वशक्तिमान् अखिलेश्वरकी लीला अपरम्पार है। होम करते हाथ जलता है। जिसके हृदयमें सदा दूसरेका उपकार करनेकी इच्छा रहती है, उसे भी कभी कभी उसका ठीक विपरीत फल मिलता है।

रानी सुनीति, तुमने किसी जन्ममें ऐसा ही कोई दुष्कर्म किया था, जिसका फल इस जन्ममें मिल रहा है, कि तुम्हें— दूसरोंका लाख लाख उपकार करते रहनेपर भी अपमानित तथा लांछित होना पड़ता है। मालूम होता है, कि यह तुम्हारे पूर्वजन्मका फल है, अथवा जगतपिता सृष्टिकर्त्ता जगदीश्वर तुम्हारे एकान्त पातिव्रत तथा दयालुता की परीक्षा ले रहे हैं, क्यों कि जो जैसा कर्म करता है, वह वैसाही फल भोगता हैं। अहा! ईश्वर तू वड़ा न्यायी है। तेरे राज्यमें क्या पंडित, क्या मूर्ख, क्या धनी, क्या दरिद्र सभी एक दृष्टिसे देखे जाते हैं। दुःख सुख तो अपने कर्मानुसार होता है।

सवेरा होते ही, दयाकी मूर्त्ति रानी सुनीतिकी निद्राभंग हुई। भू-शय्या त्याग करते ही उन्हें ध्रुव न दिखाई दिया। सहसा उनका हृदय काँप उठा। वे कुटीके बाहर निकलकर पुकारने लगीं,—"लाल! बेटा! आज क्या है जो तू अभीसे खेलनेके लिये चला गया? क्या इसी समय ऋषिकुमार तुझे लेनेके लिये आये थे जो तू चला गया? क्या तुझे आज खेलने की

इतनी जल्दी पड़ गई थी ? मैं क्या कहती हूं, किससे कहती हूँ, ध्रुव तो यहाँ है नहीं।" इतना कह रानी रोने लगीं। उनकी दोनों आँखोंसे गंगा-यमुनाकी धारा बहने लगी। फिर शान्त हो, जोरसे पुकारने लगीं, "ध्रुव! ध्रुव! बेटा! बेटा!" परन्तु सुनता कौन था? सब अरण्य रोदनमें परिणत हुआ। वे उसे एक पल भी अपनी नजरकी ओट न होने देती थीं, परन्तु आज उसका पता ही नहीं। वे उसके सन्धानमें चारों ओर इधर उधर भटकने लगीं। पर हाय! ध्रुवका पता उनको न लगा।

रानीकी यह अवस्था देख, तथा ध्रुवको लापता होते सुन, ऋषि-पत्नियोंमें हलचल मच गयी और वे भी ध्रुवको खोजनेके लिये इधर उधर दौड़ने लगीं।

रानी सुनीतिके शोकका अब क्या पूछना था। वे विलाप करती हुई कहने लगीं,—"हाय बहिनो! आज हमारे इस वनका एक मात्र सहायक, आँखोंका तारा, हृदयका उजियारा, मेरे अतीत दुःखका भुलानेवाला, मेरे दुःखका साथी, मेरा हृदयरत्न, मेरा दुःखहर्त्ता लाल ध्रुव कहाँ गया? हा ईश्वर! यह तेरा कैसा न्याय है, क्या तू दूसरेका सुख देख, ईर्षापरायण हो, उसके छीननेमें ही सदा तत्पर रहता है।

! मैंने तेरा क्या अपराध किया था! वनवासिनी

होनेपर भी जिस पुत्रके रहनेसे मैं बड़ा आनन्द उपभोग कर रही थी, उस आनन्दमें भी तू काँटा हुआ।" रानी की दु:खभरी बातें सुन, चारों ओर रोना-पीटना आरम्भ हो गया, तपोवन विलाप-वनमें परिणत हुआ।

ऋषिकुमारोंने जब अपने साथी, खिलाड़ी ध्रुवके अन्तर्द्धान हो जानेकी बात सुनी, तब वे रानी सुनीतिके निकट आकर उन्हें बहुत कुछ समझा बुझाकर बोले—"माता! ध्रुव आपका पुत्र है, परन्तु हमलोगोंका भी साथी है। हमलोग उसके बिना एक दिन भी नहीं रह सकते। हमलोग अभी जाते है, ध्रुव जहाँ होगा वहाँसे खोज लावेंगे।" इस तरह दुखिया सुनीतिको समझा बुझाकर वे भी ध्रुवकी खोजमें चले गये।

यह शोचनीय खबर राजधानीमें भी पहुँच गयी। धीरे धीरे बिजलीकी भाँति प्रजातक फैल गई। चारों ओरसे हाहाकार ध्वनि सुन पड़ने लगी। राजा उत्तानपाद रानी सुरुचिकी अभिलाषाके विरुद्ध, ध्रुवकी खोजमें चारों ओर चर भेजने लगे। परन्तु सब विफल हुआ।

राजा उत्तानपाद शोकसे अधीर हो कहने लगे—"हाय! मैं बड़ा पापी हूँ, मेरे ही अज्ञानके कारण निरपराधिनी रानी सुनीतिको वनवास तथा पुत्र वियोग-जनित नाना

प्रकारकी व्यथासे व्यथित होना पड़ता है ! हा पुत्र ! निःसन्देह रानी सुरुचिके कठोर तथा हृदय-विदारक तिरस्कारने बड़ाही भयंकर रूप धारणकर तुझे अपनी स्नेमयी मातासे अलग होनेके लिये बाध्य किया है। हाय बेटा ! तू कहाँ है ? जल्दी आ, इस अभागे बापकी गोदमें आ। मैं तुझे देख सुनीतिके विरहकी व्यथा भूल गया था। परन्तु बच्चा ! आज तेरा भी पता नहीं ? क्या तुझे मुझको इस अवस्थामें छोड़कर चला जाना उचित था ? हाय ! इतना कह राजा मूर्च्छित हो गये।

पाठक ! राजा प्रजाका सम्बन्ध कितना घनिष्ट होता है, यह कहनेकी कोई आवश्यकता नहीं। आप स्वयं इसका अनुभव कर सकते हैं। एक दूसरेके दुःखसे दुखी तथा सुखसे सुखी रहता है। यदि इन दोनोका सम्बन्ध माता-पिता या पुत्र अथवा प्राण और शरीरका कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी। इस तुच्छ लेखनीमें इतनी सामर्थ्य नहीं है, कि प्रजाका दुःख वर्णन कर सकें। यह ध्रुवका वन-गमन नहीं वल्कि राज्यके सुख मात्रका अवसान हो गया। आज प्रजागणकी सुखलता पर मानों बिजली गिर पड़ी, उनकी सब आशायें निराशामें परिणत हो गईं। ध्रुवके अदृश्य होनेका हाल प्रजाको ज्ञात होने पर, वे कहने लगीं—हा ! ध्रुव, तुम्हें किस बातका दुःख था, तुम्हें किसने क्या कहा, अवस्था ही तुम्हारी अभी क्या

थी? तुमने किस जन्मका बदला हमलोगोंसे लिया? अपने माता पिताको इस अनन्त दुःख-सागरमें डुबानेसे भी विरत न हुए! क्या तुम्हें इतनी भी समझ न थी, कि तुम्हारी एक मात्र हितैषिणी, तुम्हारे दुःखमें दुःखिनी, अनाथिनी, वनवासिनी माताकी क्या अवस्था होगी? जिन्होंने कितने दुःख सहे हैं, वनमें नाना भांतिके कष्ट सह तुम्हें लालन-पालन किया हैं, परन्तु तुम उन बातोंका कुछ भी विचार न कर अपने वाक्य पर दृढ़ हो, माताको त्याग वनको सिधारे। देखो! तुम्हारी माता घर-द्वार आदिसे वञ्चित होने पर भी किस यत्नसे तुम्हारा लालन-पालन करती रही। उस यत्नका क्या यही पुरस्कार है? नहीं, नहीं। यह तुम्हारा दोष नहीं है, परन्तु यह हमलोगोंके पूर्व्व जन्मका फल है। हमलोगोंने पूर्व्व जन्ममें ऐसा ही पाप-कर्म्म किया था, जिसका फल यह है कि हमलोगोंको राजपुत्र-लाभका आनन्द उपभोग करनेका सौभाग्य प्राप्त न हो सका। कवि तुलसीदासजीने ठीक कहा है, "जो जस करहि सो तस फल चाखा, कर्म्म प्रधान विश्व करि राखा" ईश्वर वनमें भी तेरा मंगल करें।
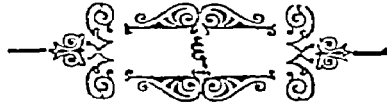
ध्रुवकी तपस्या।

ध्रुव वनमें बैठा हुआ एकान्त मनसे ईश्वर को पुकार रहा है। उसे ईश्वराराधनमें निमग्न देख, वनके अज्ञान पशु भी उसे घेर कर आनन्दाश्रु बहा रहे हैं। पाठक! क्या आप अनुभव कर सकते हैं, कि उस समयका दृश्य कैसा था। चारों ओर वृक्ष लता अपना सौन्दर्य दिखाते हुए अपनी छायासे ईश्वरगतप्राणा ध्रुवको दिवाकर के तापसे बचा रहे थे। वृक्षपर बैठी हुई चिड़िएँ चहक-चहककर ध्रुवका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कर रही थीं। बीचबीचमें ग्रीष्मकालीन गरम हवा अपने स्वभावानुसार वह रही थी।

सन्ध्या होगई, अब भी ध्रुव न उठा। वह बराबर ईश्वर-को पुकारता ही रहा। देखते देखते रात हुई। फिर भी ध्रुव स्वकर्म्म पालनसे विरत न हुआ। निद्रादेवीने सबको अपनी गोदमें शरण दिया, परन्तु ध्रुव आज निद्रादेवीकी गोदमें भी

नहीं। हाय! ध्रुव निःसन्देह तू बड़ा हतभाग्य है। राजाकी गोदसे वञ्चित होनेके कारण तुझे निद्रादेवीने भी त्याग दिया। हा! मनुष्यके बुरे दिन जब आते हैं, तब सब एक-साथ आते हैं। कुछ ही हो, ध्रुव अपने स्थानपर अटल बैठा रहा। सवेरा हो गया। एकाएक देवर्षि नारद आज उस वनमें आ पहुंचे, जहाँ ध्रुव आकुल प्राण तथा कातर वचनसे ईश्वरको पुकार रहा था। उसे इस छोटी उमरमें ही ईश्वरध्यानमें रत होते देख, उनके आश्चर्य्यका वारापार न रहा। वे कुछ देर तक चकित दृष्टिसे उसे खड़े खड़े देखते रहे। फिर बोले—"बेटा! तू कौन है? अथवा किस प्रयोजनसे इस घोर तपस्यामें लिप्त हुआ है?"

ध्रुवने उत्तर दिया—"अहा! तुम्हीं क्या हमारे सहायक तथा मनोकामना पूरणकारी परमात्मा हो?"

नारदने कहा—नहीं, मैं ईश्वर नहीं; उनका दास नारद हूँ। परन्तु तू बता, कि बालकपनके सब खेल कूद तथा भावी सांसारिक सुख, इन सबको जलाञ्जलि देकर, आज किस घर, किस परिवार, या किस हतभागिनीके गर्भसे पैदा हो, उसे पुत्ररत्न लाभके आनन्दसे वञ्चित कर, सदाके लिये कठोर तपस्यामें रत हुआ है? तुझे देखकर मेरे शरीरके समस्त रोंगटे खड़े हो गये हैं। विस्तारपूर्व्वक सब कह सुना।

ध्रुवने हाथ जोड़कर कहा—"ऋषिप्रवर ! मैंने सुना है, कि आप देवर्षि, महर्षि, सर्व्वशक्तिमान, सृष्टिकर्त्ता ब्रह्माके पुत्र हैं। आपका दर्शन प्राप्त होनेका मुझे अभीतक सौभाग्य प्राप्त न हुआ था, परन्तु उसी परमात्माकी कृपासे आज मैंने आपका दर्शन पाया है। अतएव मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।—मुनि श्रेष्ठ ! आपको स्वतः ज्ञात होगा, कि मैं राजा उत्तानपादकी वनवासिता रानी सुनीतिका पुत्र ध्रुव हूँ। एकदिन मेरी स्नेहमयी माताने मुझे राज दरबारकी शोभा देखनेके लिये कई ऋषिकुमारोंके साथ भेजा। वहाँ जानेपर राजा मुझे अपनी गोदमें बैठा, मुझे बहुत प्यार करने लगे। जिसे देख, रानी सुरुचिने ईर्षा-परवश हो, मेरा बड़ा तिरस्कार किया और अन्तमें मुझे राजगोदसे उतार दिया। मै अपमान तथा क्रोधसे जर्ज्जरित हो उठा। जिसे देख हमारे साथी खिलाड़ी ऋषिकुमार उस स्थानसे राजाकी अनिच्छा होनेपर भी मुझे ले आये। मैंने अपनी समस्त दुःखकहानी स्नेहमयी माताको कह सुनायी। उन्होंने ढाड़स देते हुए मुझसे कहा—"बेटा ! न घबड़ा, ईश्वरका ध्यानकर, वे तुझे ऐसे स्थानका अधिकारी बनावेंगे जो राज गोद, क्या राज-सिंहासनसे भी श्रेष्ठतर होगा। अतएव मैं उसी दिनसे खेलकूद छोड़, केवल ईश्वरके ध्यानमें निमग्न रहने लगा। माताके साथ

रहने और नाना भाँतिके स्नेहमय व्यवहारोंमें लिप्त रहनेके कारण मेरा ध्यान ठीक न जमता था। अतः माताकी अनुमति विना ही ईश्वराराधनमें एक तन तथा एक मन, होनेके लिये गृहत्यागी हो, वनमें आकर, मैंने इस वृक्षकी छायामें आश्रय ग्रहण किया। देखूँ, कव ईश्वर मेरा दुःख दूर करते हैं।" इतना कह ध्रुव रोने लगा।

नारद वोले—वेटा! तू अभी वच्चा है। ईश्वरका दर्शन प्राप्त करना वड़ा ही कष्टकर है।

ध्रुव—महात्मन्! मेरा जीवन चला जाये, कोई चिन्ता नहीं, परन्तु ईश्वरका नाम जपना न छोड़ूँगा। उनका दर्शन निश्चय ही प्राप्त करूँगा।

नारद—वच्चा! तू समझता नहीं। यह साधना महा कठिन है। इसमें कृतकार्य्य होना सामान्य वात नहीं है। वड़े वड़े ऋषि मुनि इस साधनामें कृतकार्य्य न हो सके हैं। फिर तेरी क्या विसात है।

ध्रुव—गुरुदेव! मुझे तो यहाँ तनिक भी क्लेश नहीं मालूम पड़ता। लोग मुझे घरमें "हाऊ आता है" कहकर डराते थे; परन्तु प्रभो, यह तो मुझसे दूर रहते हैं। एक मामूली चींटीसे प्रकाण्ड हाथी तक मुझे कुछ नहीं कहते। फिर यहाँ मुझे किस वातका क्लेश है? यहाँ तक कि जव मैं

ईश्वरका नाम लेकर जोरसे पुकारता हूँ ; उस समय मेरा मन पुलकित हो नाचने लगता है। हाय! ईश्वरका नाम लेने हीसे कितना सुख मिलता है, फिर उनका दर्शन होनेसे कितना आनन्द मिलेगा ?

नारद—ध्रुव! तू यथार्थमें ईश्वर-भक्त है। ऐसे भक्तको ईश्वर निःसन्देह दर्शन देंगे। वे दीनबन्धु हैं, निश्चय ही तुझपर सदय होंगे।

ध्रुव—ऋषिप्रवर! आशीर्वाद दीजिये कि मैं कृतकार्य्य हो सकूँ। मुझे आपसे एक अनुरोध है, वह यह है कि आप वीणायन्त्रसे जो हरिकीर्त्तन करते हैं, उसे कृपया मुझे सुना कर मेरे हृदयको शीतल कर दीजिये।

नारद ध्रुवका इतना आग्रह देख वीणापर सुमधुर हरि-कीर्त्तन करने लगे।—गीत गाते गाते नारद मुनि तथा ध्रुवके चक्षुसे लगातार आँसुओंकी धारा बहने लगी। इस गीतको श्रवण करनेके लिये दूरदूरसे वन्य पशु भी आकर बैठ गये और सुनने लगे। इस समयका दृश्य बड़ा ही मनोहर तथा रमणीय था।

ध्रुवपर अति प्रसन्न हो, नारद कहने लगे—"बच्चा! आज तेरी सब बात भगवानसे कहेंगे। न घबड़ा, वे तेरा दुःख अवश्य मोचन करेंगे। अब तू यहाँसे यमुना तटकी ओर जा।
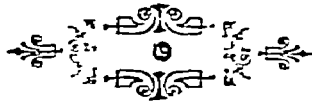
राज-सभामें नारद।
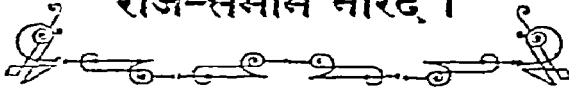
जिस समय नारद-मुनि राजा उत्तानपादकी सभामें पहुँचे, उस समय, राजा एक ऊँचे राज-सिंहासन पर विराजमान थे। अपने अपने आसनों पर सामन्त राजगण उन्हें घेरे बैठे हुए थे। किन्तु राजाका मुख आज मलिन हो रहा था—मानो किसी भयंकर चिन्ताने उनके मुखपर उदासी छा दी हो। राजसभा मौनधारण किये हुए बैठी थी। राजा, महाराजा, रईस, जमींदार, सबके मुखपर आज कालिमा छा गई थी। एक मात्र ध्रुवके अदृश्य होनेसे समस्त राजधानी आज शोक-सागरमें डूब रही थी।

अचानक सर्व्वजनपूजित महर्षि नारद आ पहुँचे। राजाने सिंहासनसे उठकर साष्टांग प्रणाम कर, उन्हें बैठनेके लिये अनुरोध किया और स्वतः उनके चरणतल पर बैठ गये।

राजाको चिन्तामग्न देखकर नारद बोले—"कहिये महाराज ! आज आपको मैं अत्यन्त चिन्तामग्न देखता हूँ । आर्थिक हानि तो आपको कुछ नहीं पहुँची ?

उत्तानपादने नम्र स्वरमें कहा—"मुनिवर ! सुरुचिके मायाजालमें मुग्ध और हिताहितज्ञानशून्य हो, मैंने बिना विचारे प्रधान राजमहिषी सुनीतिको वनवासिनी बना दिया । अहा ! सुनीति, सच्चरित्रा, धर्मपरायणा, सद्गुणान्विता, तथा स्नेहशीला हैं । उन्हें वनवासिनी बनाकर मैं एक कठोर दण्डका भागी हुआ हूँ । मैंने घरकी लक्ष्मीको नाना भाँतिके वन्यकष्ट झेलनेके लिये वनमें भेज दिया है । हाय ! क्या ही निष्ठुर कर्म मैंने किया ? इसका प्रायश्चित्त अब नहीं हो सकता ।" इतना कह राजा चुप हो गये ।

नारद—महाराज ! आपके कष्टका और भी कोई कारण है ?

उत्तानपाद—देवर्षि ! हाँ और भी कारण है । कुछ दिन बीते, सुनीतिका बेटा, मेरा पुत्र ध्रुव, कुछ ऋषिकुमारोंके साथ इस दरबारमें आया था । मैं उसे गोदमें बैठा आँसू बहा रहा था, कि इतनी देरमें रानी सुरुचिने क्रोधान्ध हो, ध्रुवका कठोर तिरस्कार करते हुए, उसे गोदसे उतार दिया और अपने पुत्र उत्तमको बैठा दिया । ध्रुव अति लज्जित

तथा दुःखित हो ऋषिकुमारोंके साथ वनकी ओर चला गया।

नारद—फिर क्या हुआ?

उत्तानपाद—फिर सुना कि ध्रुव कहीं चला गया है, सुनीति उसके वियोगमें उन्मादिनी हुई है। देवर्षि! इन्हीं कारणोंसे मुझे आहार-विहारमें कुछ सुख नहीं मिलता। अब कहिये, अपने हृदयरत्न ध्रुवको कहाँ पाऊँ? आप अन्तर्य्यामी हैं, आपको सब विदित होगा। बताइये ध्रुव कहाँ है? मेरा हृदय विदीर्ण हो रहा है। ध्रुवके न मिलनेसे रानी सुनीति आत्महत्या कर सकती है। मुनिवर! इन सब उपद्रवोंकी जड़ मैं ही हूं। इतना कह राजा आँसू बहाने लगे।

नारद—राजन्! शान्त होइये, अधीर न होइये। स्त्रीके वशीभूत हो आपने अन्याय कर्म्म अवश्य किया है, तथापि ईश्वर आपको क्षमा करेंगे। अनुताप पापका प्रायश्चित्त है। आपने अनुताप किया है, अतएव आप पापमुक्त होंगे। साथ ही ध्रुवके लिये भी चिन्ता न करिये।

उत्तानपाद—मुनिवर! ध्रुव कहाँ है? क्या आप जानते हैं? अहा! क्या ही अपूर्व्व सौंदर्य्य उसका था? क्या ही मीठी तोतली बोली बोलता था? कृपा कर

एकबार उसे हमारे पास ले आइये। उसे देख अपनी आँखे ठंढी करूँ।

नारद—वह बनमें तपस्या कर रहा है, और जबतक ईश्वरका दर्शन उसे न मिलेगा, तबतक वह उस स्थानको न त्याग करेगा। मैं उसको सब समझा बुझा चुका हूँ। वह निःसन्देह अपनी साधनामें कृतकार्य्य होकर एक अपूर्व आनन्दधाम लाभ करेगा। उसके तपोबलसे सुनीति देवीका भी दुःख दूर होगा और आपलोग भी सुखी होंगे।

उत्तानपाद नारदको बात सुन, अति प्रसन्न हो बोले—"महर्षि! आपको बात सुनकर मैं बड़ा प्रसन्न हुआ हूँ, परन्तु यदि आप थोड़ा और कष्ट करें तो बहुत ही उत्तम हो। कृपया रानी सुनीतिके पास जाकर ध्रुवका समाचार उन्हें देदें तो उनका जी भी ठिकाने आवे। वे रात दिन उसीके सोचमें पगली हो रही हैं।"

नारद बोले,—निःसन्देह मैं सुनीतिकी ओर जाऊँगा। मैंने तो पहिले ही स्थिर कर लिया था। अब मैं चला। इतना कह नारद राजदरबार त्याग सुनीतिकी कुटीकी ओर चले।

सुनीतिके पास पहुँचते ही वे सुनीतिको एकान्तमें फूट फूट कर रोते देख, अति चकित हो, कुछ देर तक खड़े रहे। रानी सुनीति नारदको अपनी ओर आते हुए देख,

उनके चरणोंपर गिर पड़ीं और कातर स्वरमें बोलीं—"कहिये हमारा ध्रुव कहाँ है? हमारा ध्रुव कहाँ है? हमारा नयनतारा कहाँ है? जिससे आज मेरी यह कुटी अन्धकार सी प्रतीत होती है, वह मेरी कुटीका उजियाला कहाँ है? लोग कहते हैं, कि नारद मुनि सर्वज्ञानी हैं, अतएव हे महाराज! बताइये हमारा ध्रुव कहाँ है?"

रानीको इस प्रकार विलाप करते देख, दयाके अवतार नारद भी अश्रु बहाने लगे और सुनीतिका हाथ पकड़ कर बोले "मा! उठो, बहुत हुआ, अब दुःख न करो। ध्रुव ईश्वरका दर्शन पानेके लिये आज मधुवनमें एक कठोर तपस्याका अधिकारी हुआ है। मैं उसे नाना प्रकारके उपदेश देकर आ रहा हूं। वह निःसन्देह अपनी साधनामें कृतकार्य्य होगा। शान्त हो, शान्त हो, वही तुम्हारा सब दुःख दूर करेगा, उसकी चिन्ता अब न करो। हाय! सुनीति, तुमको भी बहुत कष्ट सहने पड़े।"

सुनकर सुनीतिको कुछ धीरज हुआ। भला देवर्षि नारदकी बातोंपर कौन अविश्वास कर सकता है?

रानीको कुछ शान्त देखकर देवर्षि नारदने बहुत तरहसे उन्हें समझा बुझाकर शान्त किया। इसके बाद, उनसे बिदा ले, भगवद्भजन करते हुए एक ओर चले गये।

ध्रुवकी कठोर साधना।

देवर्षि नारदसे विदा हो ध्रुव मधुवनकी ओर रवाना हुआ। उसका मन आनन्दसे नृत्य करने लगा, उसके हृदयमें भी उस समय एक अतीव बलका सञ्चार होने लगा। वह मनही मह कहने लगा—हाँ, अब शीघ्र ही ईश्वरका दर्शन होगा। नारद मुनिने कहा है,—मधुवनमें जाओ, वहीं ईश्वरका दर्शन होगा। क्या उनकी बात न फलेगी? निश्चय फलेगी, वे सृष्टिकर्त्ताके पुत्र हैं। उनकी बात सच न हो तो किसकी बात सच होगी।"

नारदके दिये हुए मन्त्रको जपता हुआ ध्रुव जा रहा है। उसे यह नहीं मालूम कि वह किस ओर जा रहा है। ठीक है, जिसको जिस बातकी धुन रहती हैं, वह उसीमें मग्न हो जाता है। अस्तु हमलोगोंके ध्रुवको ईश्वर दर्शनकी पड़ी है, इस लिये आज वह उन्हींके सन्धानमें मधुवनकी

ओर, भयंकर वनके भीतरसे जा रहा है। उसे अपने तन-बदनकी सुध नहीं है, वह केवल ईश्वर दर्शन करनेमें ही मग्न है।

पाठक! इसमें कोई सन्देह नहीं, कि ध्रुव अपनी साधनामें कृतकार्य्य होगा क्यों कि तुलसीदासजीने लिखा है "जेहिपर जाकर सत्य सनेहू। सो तेंहि मिलै न कछु सन्देहू। अतएव ध्रुव निःसन्देह अपना मनोरथ पूर्ण करेगा, वह ईश्वरगतप्राण है, यद्यपि वह इस समय वनमें भ्रमण कर रहा है, परन्तु उसका मन ईश्वरके ध्यानमें मग्न है,—ऐसे पर क्यों न ईश्वर प्रसन्न होंगे?

मधुवनमें प्रवेश कर ध्रुवने देखा, यह कोई सामान्य स्थान नहीं है, वनके एक ओरसे यमुना देवी अपनी विशालवाहिनीके साथ प्रवाहित हो रहीं हैं। चारों ओरसे नाना भाँतिके वृक्ष तथा लता आदिसे वह स्थान सुशोभित हो रहा है, नाना प्रकारके पक्षी वृक्षपर बैठे हुए कलरव कर समस्त वनको प्रतिध्वनित कर रहे हैं। ध्रुव कुछ देर उस स्थानपर खड़ा रह, एक वार आकाशकी ओर देखता हुआ कहने लगा—"दीनवन्धु! मैं दुःखी अवोध वालक हूँ, मेरी मा बड़ी दुःखिनी हैं, वे राजाकी स्त्री होने पर भी आज वनवासिनी हैं। अतएव मैं प्रार्थना करता हूँ, कि उस अनाथिनी-

को किसी बातका कष्ट न हो। इस पर सदैव ध्यान रखना। हाय स्नेहमयी! क्या जानें तेरी क्या दशा हुई होगी? ईश्वरको लक्ष्य करते हुए पुनः वह कहने लगा—"दयामय! मैं धन नहीं चाहता, मान नहीं चाहता, प्रतिहिंसा लेना नहीं चाहता, जन नहीं चाहता, मैं केवल आपके श्रीमुखका दर्शन-प्रार्थी हूँ। प्रभो, सुना है, कि जिस नरने आपका दर्शन पाया है, वही संसारके यथार्थ सुखका अधिकारी हुआ है। तुम मुझे उसी धनसे धनी करो। उसीमें मैं सन्तुष्ट हूँ। वह ऐसा धन हैं, जिसके सामने समस्त धन तुच्छ है, उस धनके पानेके लिये बड़े बड़े ऋषि, मुनि अकृतकार्य्य हुए हैं। उसी धनका मैं धनी होना चाहता हूँ। उस धनसे धनी हो, अपनी माताको भी धनी करूँगा, पिताको भी धनी करूँगा, यहाँ तक कि समस्त भूमण्डलको उसी एक धनसे धनी करूँगा। दीनबन्धु, एक और निवेदन है, वह यह है कि मैं एक स्थानका प्रार्थी हुआ हूँ, जो राजसिंहासनसे श्रेष्ठतर तथा शान्तिप्रद हो। जिस स्थानमें मैं अपनी एक मात्र सहायिका स्नेहमयीको लेकर आनन्दसे अपना जीवन बिता सकूँ।"

इतना कह, ध्रुव स्नानादिसे निवृत्त हो, एक शीतल बड़के गाछके नीचे बैठ गया और कहने लगा—"चाहे प्राण

रहे चाहे न रहे, जबतक ईश्वरका दर्शन न पा लूँगा, तबतक यह स्थान न त्यागूँगा।" इतना कह वह तपस्यामें लिप्त हुआ।

सुनीतिका पञ्चवर्षीय बालक ध्रुव एक कठिन साधनामें निमग्न है,—उसके मुखसे एक अपूर्व्व स्वर्गीय ज्योति निकल रही है, दोनो आँखोंसे प्रेमके आँसुओंकी धारा बह रही है। इस समयका दृश्य कितना ही मनोहर है। इस दृश्यको देखने हीसे प्राण विमोहित होता है, एक निर्दयसे निर्दयका भी हृदय पिघल जाता है, घोर नास्तिकका भी हृदय ईश्वरगत हो जाता है। घोर पापी भी इस दृश्यको देख पुण्यकर्म्म करनेमें तत्पर होता है। पाठक! ऐसा दृश्य हमलोग क्यों न देखें? हमलोगोंका ऐसा सौभाग्य नहीं है, कि आज उस दृश्यको देख अपना हृदय शीतल करें। ऐसे शुभवसरमें उस दृश्यको देखनेवाला कोई नहीं। केवल वन्यपशु और वृक्ष पर बैठी हुई चिड़ियाओंका दल। किन्तु आज तारे भी ध्रुवका ध्यानमग्न मुखड़ा देख विमोहित हो नित्यसे चौगुनी छटा विकाश कर रहे हैं और इसी कारण वन्यपशु भी उसको चारों ओरसे घेर, पहरा दे रहे हैं। मानो वे लोग मांसत्यागी हो गये हैं, मांसको तो खाते ही नहीं। आज केवल एक बाल-तपस्वीने वनको

अपनी ओर आकृष्ट कर लिया है ! ध्रुव तू धन्य है, जबतक दुनियां है, तबतक तेरा नाम है ।

साधना दिनपर दिन कठोरतर होने लगी, ध्रुव, कभी तो दो एक फल, कभी सूखे पत्ते या कभी हवा सेवन कर दिन बिताता था । इसी प्रकार कई महीने बीतने पर, वह एक पांवके सहारे तपस्या करने लगा । देवता प्रारम्भ हीसे ध्रुवके अविचलित संकल्पकी बात जानते थे । अब उसकी यह साधना देखकर वे डर गये । इन्द्र आदि देवता समझने लगे, कि ध्रुव यदि इस साधनामें सफल होगा तो उन लोगोंके प्रभावका क्रमागत अवसान होगा । धनैश्वर्य्य आदि सब घट जायँगे । इसी लिये वे लोग एकत्रित होकर विचार करने लगे कि क्या करना चाहिये ? ध्रुव तो दिन पर दिन आगे ही बढ़ता जाता है । यदि उसकी साधना सफल हुई तो हमलोग एक पञ्चवर्षीय बालक द्वारा पराजित कहलायँगे । अतएव वे घोर चिन्तामें निमग्न रह विचार करने लगे ।

देवताओंने एक मत होकर एक सभा की । इन्द्र देवने सभापतिका आसन ग्रहण कर वक्तृता दी,—"महाशयगण ! आप लोगोंको स्वयं विदित होगा, कि आजकल मृत्युलोकमें ध्रुव नामक एक प्रतापी राजपुत्र, जैसी कठिन साधनामें

लित है, उससे सम्भव है, कि वह शीघ्र ही कृतकार्य्य हो। अतएव हे सभासद्गण! आपलोगोंकी क्या राय हैं? पञ्चवर्षीय बालक द्वारा हम लोगोंका परास्त होना बड़े दुःखकी बात है। आज हम लोगोंके प्रतापसे समस्त ब्रह्माण्ड कम्पित हो रहा है,—यह आपलोग स्वयं जानते हैं,—कल वह बालक इस ब्रह्माण्डको शासन करनेका अंशभागी होगा।" सबोंने अपना अपना मत देते हुए कहा—"जिस तरहसे हो उसके ध्यानमें विघ्न डालना चाहिये।" अतः इन्द्रादि कितने ही देवता ध्रुवकी तपस्यामें विघ्न डालनेके लिये षड्यन्त्रकी रचना करने लगे।

सन्ध्या हो गई है। भगवान सूर्य्यदेव अस्ताचल पर्व्वत पर सिधार चुके हैं, धीरे धीरे अन्धकार अपना अधिकार बढ़ाता चला आता है, साथ ही अन्धकारके परम मित्र तथा सहायक मेघ भी आकाशमें इधर उधर घूमकर अंधियारीको बढ़ाते ही जा रहे हैं। नदीके तटस्थ मधुवनमें भयानक सन्नाटा छाया हुआ है। मालूम होता हैं, इस समय वहां शान्ति देवीका अटल राज्य हो रहा है।

ऐसे ही भयानक समयमें तपस्वी बालक ध्रुव अटल भावसे ईश्वरके ध्यानमें मग्न हैं। उस दृश्यको जो देखता है, वही कहता है, निःसन्देह यह नर नहीं है,—बल्कि

नराकारमें देवता है। उस दृश्यको देखनेसे कैसा ही नीच, नराधम, निर्दय मनुष्य क्यों न हो, उसके हृदयमें भी उच्चता, मनुष्यत्व और दयाका आविर्भाव होता है। उस दृश्यको देखते ही एकबार पत्थर भी मोम सा गल जाता है।

अचानक इसी समय माया सुनीतिका रूप धारण कर ध्रुवके सामने आई और रोती हुई कहने लगी, "बेटा, ध्रुव, तू मुझे छोड़कर कैसे चला आया? क्या तुझे मालूम न था कि तेरी अनुपस्थितिमें मेरी क्या दशा होगी? तुझे शय्यापर न देखकर मैं घबड़ा गई और पगलीकी भांति इस वनसे उस वनमें भटकने लगी, परन्तु तुझे न पाया। ऋषिपत्नियोंने भी समस्त वन छान डाले परन्तु बेटा, तेरा कहीं पता न लगा। ऋषिकुमार आकर मुझे नाना प्रकारकी मीठी बातोंसे समझाने लगे परन्तु सब विफल हुआ। मेरा दिल न माना। मैं कुटी त्याग कर चारों ओर तुझे खोजती हुई यहाँ तक आ पहुँची। बेटा! देर न कर। चल, यदि न चलेगा, तो याद रखना मुझे तू फिर जीवित न पावेगा।" ध्रुवने एक बार अपनी आँखें खोल, स्नेहमयीको निकट बैठी हुई देख, फिर :अपनी आँख बन्द कर लीं। माया वेशधारिणी सुनीति अपना प्रभाव ध्रुव पर न पड़ते देख, एक ओर चली गयी।

प्यारे पाठकगण ! यह ध्रुवकी प्रथम परीक्षा हो गयी। परन्तु इस परीक्षामें ध्रुव उत्तीर्ण हुआ। अब आइये, दूसरी परीक्षा देखें। कुछ देरके बाद एक दल बनैले भेड़ियोंका आया। ये मामूली भेड़िये न थे बल्कि ऊँटसे ऊँचे, लम्बे जिन्हें देखते ही वीरसे वीरके हृदयमें भी भयका सञ्चार हो जाता। फिर हमारे ध्रुवके हृदयमें क्यों नहीं भयका सञ्चार हुआ ? एकाग्रता इसका प्रधान कारण है। उसका ध्यान ईश्वरमें है, बाहरी आडम्बरसे कुछ सम्पर्क नहीं है, बाघ भेड़िये ध्रुवको चारो ओरसे घेरकर बैठ गये और विकट डरावना चित्कार करने लगे किन्तु ध्रुव अटल रहा। अपना समस्त प्रयत्न विफल होते देखकर वे भी चले गये।

प्यारे पाठक ! दूसरी परीक्षा भी हो गई। उसमें भी ध्रुव उत्तीर्ण हुआ। इसी प्रकार नाना प्रकारकी परीक्षाएँ होती रहीं परन्तु सबमें ध्रुव उत्तीर्ण हुआ। धन्य ! ध्रुव ! जब तू समस्त परीक्षाओंमें उत्तीर्ण हुआ है, तो निःसन्देह तू अपनी साधनामें भी कृतकार्य्य होगा।
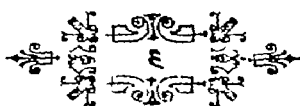
ध्रुवकी सफलता।

देवताओंने ध्रुवका ध्यान भङ्ग करनेके लिये, इतने विघ्नोंका आविष्कार किया, किन्तु इनके द्वारा सफलता प्राप्त करनेकी कोई आशा न देख, वे सब एकत्र हो, अब वैकुण्ठमें विष्णु भगवानके पास गये।

वे एक स्वरसे कहने लगे, "दयानिधि! ध्रुवकी कठिन तपस्या देखकर हमारे हृदयमें भय होने लगा है। हम लोगोंने और किसीको ऐसी घोर तपस्या करते नहीं देखा। दीनानाथ! हम लोग देखते हैं, कि ध्रुव इस तपस्याके बलसे सूर्य्य भगवानकी भाँति तेजस्वी हो जायगा और हम सभोंका प्रभाव एक साधारण दीपककी भी तुलना न कर सकेगा, तथा धन सम्पत्तिमें भी कुबेर ऐसे धनीको यदि ध्रुवके सम्मुख दरिद्र कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी। अतः आप दयाकर कोई ऐसा उपाय बताइये, जिससे हमलोगोंका निस्तार हो।

विष्णु भगवानने देवताओंकी वात सुनकर हँसते हुए कहा—"आप लोगोंके भयभीत होनेकी कोई आवश्यकता नहीं है, कारण ध्रुवकी तपस्याका एक मात्र उद्देश्य मेरा मिलन ही है। न उसे धनकी लालसा है, न इन्द्रासनकी। यदि उसको ये लालसाएँ होतीं तो निःसन्देह आप लोगोंका कहना सत्य होता। अत. आपलोग जायें, डरकी कोई वात नहीं है।" अव उनकी जानमें जान आयी। उनकी वात सुन देवतागण अपने अपने स्थानको चल पड़े। ध्रुव उसी तरह तपस्यामें लीन वैठा रहा।

वहुत दिनोंके वाद एक दिन लक्ष्मीने विष्णु भगवानसे कहा—"प्रियतम! ध्रुव जो आपके दर्शनार्थ इतना दुःख सहता हुआ वाल्यावस्थामें कठिन तपस्या कर रहा है, उससे क्या आपको दया नहीं आती? क्या आप उसे शीघ्र दर्शन न देंगे?"

लक्ष्मीकी वात सुन शेष शैय्यापर सोने वाले भगवान वोले,—"प्रिये! मैंने उसके लिये सप्तर्षि मण्डलके ऊपरी भागमें उसका निवासस्थान वनवाया है। उसी स्थानमें ध्रुव अपनी माता सहित रहा करेगा और उस स्थानका नाम "ध्रुव—लोक" रहेगा।

भगवानका दर्शन।
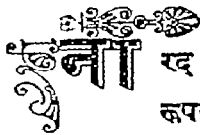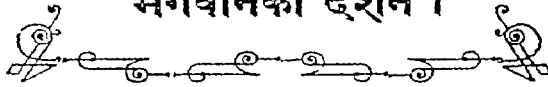
नारद मुनिने ध्रुवको दीक्षा देते समय, नारायणके रूपका पूरा पूरा वर्णन कर दिया है। मुनिवरके बताये हुए मनोहर रूपको ध्रुवने हृदयसिंहासनका अधिकारी बना रक्खा है। अतएव आज ध्रुव ईश्वरका दर्शनके लिये अति उद्विग्न है। साथ ही साथ मधुवनने भी भगवानके स्वागतके लिये नाना प्रकारकी शोभाकी रचना की है।

प्यारे पाठकगण! आइये पहिले जलप्रवाहिनी यमुना-देवीकी ओर चलें, जिसकी सुन्दरता नील और श्वेतवर्ण पद्मोंसे तथा स्वच्छ नीरसे और भी बढ़ गयी है। इस नदीके दोनों किनारे रम्भा तथा नारियलके वृक्ष इस प्रकारसे लगाये गये हैं, कि जिन्हें देखनेसे नेत्रोंको अपूर्व्व आनन्द प्राप्त होता है। एक वृक्षके पत्र दूसरेके पत्रसे ऐसे मिल गये हैं मानो द्वार ही हों। इन कदली स्तम्भोंके पीछे बहुतेरे आम, ताड़, कटहल, पीपल आदिके वृक्षोंसे घिरा हुआ मधुवन है,

जहां हमारा पूर्वपरिचित ध्रुव ईश्वराराधनमें लिप्त है। इस मधुवनकी शोभा वर्णन करना बड़ा कठिन है, परन्तु बिना किये रहा नहीं जाता। इस वनमें हिंसक जन्तुओंकी संख्या भरपूर है। विहङ्गोंका कर्ण प्रियगान रह रह कर गूंज उठता है। मयूरोंके दल इधरसे उधर जाते ऐसे दृष्टिगत होते हैं, मानों हमलोगोंको सूचित कर रहे हैं, कि स्वतन्त्रता सुखकी खान है। पद्माच्छादित यमुना नदीके दोनों किनारों पर उत्पन्न कदली वृक्ष मन्द मन्द पवनके झकोरेसे कांपते हुए ऐसे देख पड़ते हैं, मानो उस नदीको पंखे झल रहे हों।

पाठकगण! आज और दिनसे मधुवनकी विचित्र शोभा है,—पूर्व्वमें निर्म्मल आकाशमें सूर्य्यदेव उदित हो, अपनी अपूर्व छटासे समस्त अन्धकारमय जगतको जाज्वल्यमान कर रहे हैं। वसन्तकालीन मन्द वायु वृक्षलता आदिको हिलाता डुलाता बह रहा है। कोकिल मधुर स्वरसे वनको आमोदित कर रही है। ध्रुव ध्यान मग्न नयनोंसे ईश्वरकी मङ्गलमय मूर्तिका हृदयमें ध्यान कर रहा है। अचानक उसके हृदयमें एक अपूर्व ज्योतिका आविर्भाव हुआ। उसने अपने जीवन भर ऐसा तेज नहीं देखा था। उस ज्योतिको देख, वह आश्चर्य्यमें आ गया, परन्तु फिर देखा, कि उसके आराध्यदेव आ रहे हैं।

साक्षात् श्रीविष्णु भगवानको अपनी ओर आते हुए देख उससे रहा न गया। वह रोता हुआ बोल उठा, "दुःखत्राता! बहुत दिनसे मैं तुम्हें पानेकी चेष्टा कर रहा था, परन्तु आज मेरी साधना सफल हुई। कितने ही भक्तोंसे मैंने सुना है, कि तुम्हारी ओर एक बार दृष्टिपात करनेसे फिर किसी ओर दृष्टि फेरनेकी इच्छा नहीं होती है। वास्तवमें यह बात सच है। हमारी अब दृष्टि फेरनेकी इच्छा नहीं होती।"

विष्णु भगवान बोले—"बच्चा! तू यथार्थमें हमारा दर्शनाभिलाषी था। बोल, तू क्या चाहता है?"

ध्रुवने कहा—"हम तुम्हींको चाहते हैं, हम जब तुम्हें पुकारें तब कृपया उसी समय दर्शन देना।"

विष्णु भगवानने कहा—"मैंने तेरे ऐसा सच्चा भक्त आज तक न देखा। तू जो माँगेगा वही तुझे मिलेगा। तू जब मुझे बुलावेगा, उसी समय मैं तुझसे मिलूंगा। मैंने तेरे लिये स्वर्गमें सप्तऋषि मण्डलके ऊपर वासस्थान बनवाया है। उस स्थानका नाम आजसे "ध्रुव-लोक" रक्खा गया, उस स्थानमें चिरशान्ति, चिरआनन्द विराजता रहेगा। पृथिवी-के सब स्थान टलते रहेंगे परन्तु तेरा स्थान कभी न टलेगा, सर्वदा अटल रहेगा। परन्तु एक बात है, तुझे कुछ दिन

तक राज्य करना ही होगा, क्योंकि तू अपनी माताके दुःखको मिटाने के लिये ही इस कठोर तपका तपी हुआ था। उनको सुखी करना तेरा कर्त्तव्य है। तेरे लौट जानेपर राजा उत्तानपाद तुझीको राज-सिंहासनपर बैठावेंगे।

ध्रुवने कहा—"दयानिधे! हमारे लौट जाने पर यदि हमारी माता पूछें, कि बेटा! इतने दिनों बाद हमारे लिये तू क्या लाया? तो हम क्या जवाब देंगे?"

विष्णु भगवान बोले—"इतने वर्ष परिश्रम कर तू जिस धनका धनी हुआ है, तेरी मा बिना साधनाके कैसे उस धनकी अधिकारिणी हो सकती हैं?"

ध्रुवने कहा—"नहीं जगतपिता! यह न होगा। मेरे राजा होनेसे वे सुखी होंगी निःसन्देह, किन्तु तुम्हें न पाकर कौन प्रकृत सुखका अधिकारी हो सकता है? तुम्हारे ऐसा अमूल्य रत्न यदि मैं अपनी जननीको न दे सकूँ तो मेरे मनमें एक बड़ा क्षोभ रह जायगा।"

"तुझ पर मैं बड़ा प्रसन्न हुआ हूँ। तू जो चाहेगा वही तुझे मिलेगा।" इतना कह विष्णु भगवान अन्तर्द्धान हो गये।

ध्रुवकी राज्य-प्राप्ति ।
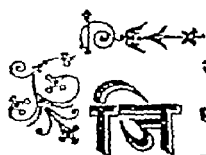
जिस मनोकामनाकी पूर्तिके लिये, तथा जिस स्थान लाभके लिये ध्रुव कठोर साधनामें लिप्त हुआ था, उसमें आज वह कृतकार्य्य हुआ। सृष्टिकर्त्ताने उसकी सभी कामनायें पूर्ण कर दीं। वे मनोहर मूर्त्ति धारण कर ध्रुवके सम्मुख आविर्भूत हुए और उसके लिये आकाशके अति उच्चस्थलमें वासस्थान निर्माण करनेकी वात कह, उसकी बहुत दिनोंकी आशा पूर्ण की।

ध्रुवके पुनरागमनकी वात चारों ओर फैल गई। देवर्षि नारदके चरोंने इस शुभवार्त्ताको राजाके कर्णगोचर किया। सहृदय राज-राजेश्वर उत्तानपादने स्वराज्यके चारों ओर ध्रुवके पुनरागमनकी वात फैला दी। दुःखिनी सुनीतिके पास भी यह सुख समाचार भेजा गया। उत्तानपाद उन्हें अपने घर

लानेका उपाय करने लगे। थोड़ी देरके बाद वनवासिनी भार्याको, पुनः राजमहिषीके पद पर सुशोभित करनेके लिये, राजाने स्वर्णमण्डित पालकी, नौकर-चाकर, दासी तथा सिपाही आदि भेजे। वे बड़े आनन्दके साथ ध्रुवजननी सुनीति-देवीको लेनेके लिये जय-ध्वनि करते हुए चले।

वनमें इन सबको देख, अरण्यवासी अति चकित हो अपनी अपनी कुटीसे छिप कर राजकीय दलको देखने लगे। फिर यह दल सुनीतिकी कुटीके पास पहुंचा। सबोंने सुनीतिदेवीको प्रणाम किया। फिर इस दलके प्रधान सरदारने पुनः प्रणाम करते हुए सुनीतिसे कहा—"देवि! राजपुत्र ध्रुव आ रहे हैं। राजाने आपके लिये पालकी भेजी है। कृपया चलिये।"

सुनीतिदेवीका आज सुप्रभात है। ध्रुवके आनेकी बात सुन आनन्दसे उनका हृदय नाचने लगा। उनके चक्षुद्वयसे आनन्दाश्रु प्रवाहित होने लगे। सुनीतिके वन त्यागकी बात चारों ओर फैल गई। ऋषिपत्नी तथा ऋषिबालक चारों ओरसे सुनीतिको घेरकर नाना प्रकारके आशीर्वाद देते हुए अपने अपने कर्त्तव्य-पालनके लिये चल पड़ीं। राजप्रासादमें पहुंचनेपर सुरुचि रानी सुनीतिके चरण पर मस्तक रख रोने लगी—"बहिन! मुझे क्षमा करो, मैंने एक घोर पाप किया

है। उस पापका प्रायश्चित्त अब होगा। पर केवल तुम्हारे क्षमा करनेसे मैं उस भयंकर पापसे मुक्त होऊंगी।"

रानी सुनीति, सुरुचिको ढाढ़स बंधाती हुई कहने लगीं —"बहिन। यह तुम्हारा अपराध नहीं है? बल्कि मेरे दुर्भाग्यका कारण है। जाने दो, उन बातोंसे कुछ मतलब नहीं। कहो, क्या समाचार है?" रानी सुनीतिसे इसी तरह वार्त्तालाप होने लगा। आज वह श्मशानवत् राजपुरी पुनः पूर्व्व गौरवसे गौरवान्वित हो उठी।

कुछ दिन आनन्दसे बीतने पर राजा उत्तानपादने ध्रुवको युवराज पद पर अभिषिक्त करनेका प्रस्ताव रानी सुनीतिके सम्मुख उठाया और ध्रुवसे बोले—"बेटा! अब मैं वानप्रस्थ आश्रम ग्रहण कर अपना अवशिष्ट जीवन वनमें बिताना चाहता हूं, अतएव मैं तुम्हें युवराज पदपर अभिषिक्त करूँगा। कहो, तुम्हारी क्या इच्छा है?"

ध्रुवने कहा—"पिता! जगत्पिता जगदीश्वरने पहिले ही मुझसे कहा था, कि बेटा तुझे कुछ दिन राज्य करना ही होगा। अतएव मैं आपके प्रस्तावको सादर स्वीकार करता हूँ।"

उत्तानपाद ध्रुवको राज्याभिषिक्त करनेका प्रबन्ध करने लगे। राज्यके चारों ओर इस शुभ वार्त्ताके प्रकाश होनेसे

सब प्रजा आनन्द उत्सवमें निमग्न हुई। समस्त प्रजामण्डली कहने लगी, हमलोग सब ईश्वरभक्त ध्रुवकी प्रजा होंगे, यह क्या कम सौभाग्यकी बात है।

अभिषेकका दिन स्थिर हुआ, राजभवन नर नारियोंसे पूर्ण हो गया। उस समय राज दरवारकी विचित्र शोभा हो रही थी, जिस गृहमे ध्रुवके अभिषिक्त होनेकी बात थी, वह ठीक इन्द्रपुरीसा सजाया गया था। अभिषेकका समय आने पर, राजा उठ खड़े हुए और समस्त उपस्थित प्रजा मण्डलीके समक्ष कहने लगे—"प्यारे भाइयो! मैं आज अपने पुत्रको सिंहासन पर बैठाता हूँ। आजसे यही इस राज्यका राजा हुआ।" समस्त प्रजा बोल उठी,—"जय, ध्रुवकी जय, राजा उत्तानपादकी जय।" उस दिन आनन्द कोलाहलसे राजपुरी चारों ओर गूंज उठी। धनी, निर्धन, सबको राजपुरी में पेट भर भोजन मिलने लगा। साथ ही साथ धन रत्न भी ब्राह्मणोंको बटने लगा।

पाठक! आप जानते हैं कि मुझे ध्रुवके लिये सम्मान सूचक शब्द व्यवहार करना चाहिये, कारण वे अब राजा हुए वे अपने अपूर्व आत्मबल तथा चरित्रबलसे प्रजाको पुत्रकी भाँति प्यार करने लगे। उनके राजत्व कालमें, उनके सुशासनमें, क्या धनी क्या दरिद्र, सब ही आनन्दसे जीवन विताने

लगे। किसीको किसी बातका कष्ट न होता था। ध्रुवके स्वयम् हरिभक्त होनेके कारण समस्त प्रजामण्डलीमें धर्म्म प्रवाह होने लगा। शठता, चोरी प्रभृति गुरुतर अपराधोंका ध्रुवके राजत्वमें अवसान हो गया।

धर्मपरायण राजा उत्तानपाद ध्रुवको सिंहासन पर बैठा वाणप्रस्थाश्रमी होनेके लिये राजधानी त्यागकर वनकी ओर चले। ध्रुवका कनिष्ठ भ्राता उत्तम वनमें मृगयाके लिये गया, वहीं यक्षोंने उसका प्राणसंहार किया। यह शोकवार्त्ता रानी सुरुचिके कर्ण गोचर होनेपर वे आत्मघातिनी: हुईं। ध्रुव अपने भाईका बदला लेनेके लिये यक्षोंके विरुद्ध संग्राममें प्रवृत्त हो, जयी हुए।

ध्रुव-लोक।

बहुत दिनोंतक राज्यकर ध्रुव अपने ज्येष्ठ पुत्रको सिंहासनपर बैठा, अपने अभिलषित स्थान "ध्रुव लोककी" यात्राकी तय्यारी करने लगे। अचानक उज्ज्वल आलोक छटा आकाशमें दीख पड़ी। धीरे धीरे आकाशसे विमान उतरने लगा। जिसे देख, ध्रुव अति आश्चर्य्यान्वित हुए। विमानारोही जो स्वर्गीय दूतसे प्रतीत होते थे, वे रथसे उतरकर बोले, "महाराज! सर्व्वशक्तिमान् सृष्टिकर्त्ता विष्णु भगवानने आज मुझे आपकी सेवामें भेजा है और कहा है कि जहांतक जल्द हो, महाराजको शीघ्र साथ ले आओ। अतएव कृपाकर इस विमान पर आरोहण कर चलिये!"

प्यारे पाठक! भगवानकी यह आज्ञा सुनते ही ध्रुव माता सहित विमानपर चढ़, एक उच्चतम तथा शान्तिप्रद स्थानमें जा पहुंचा, जिसका नाम "ध्रुव लोक" है। वह स्थान आज तक अटल है! धन्य ध्रुव! धन्य तेरी साधना!!

सुप्रसिद्ध पाठक एण्ड कम्पनी की

उत्तमोत्तम पुस्तकें।

भक्त प्रह्लाद।

अनेकानेक चित्रोंसे सुशोभित—

परम भक्त प्रह्लादका यह जीवन चरित्र बालकोंकी शिक्षाका एक अपूर्व साधन, उनके चरित्रको सुधारनेका यंत्र तथा विपद्‌की कसौटी पर दृढ़ रहना सिखानेवाला एक प्रयोग किया हुआ स्वयं सिद्ध तन्त्र है। राक्षस-राज हिरण्यकशिपुका एक मात्र पुत्र प्रह्लाद, भगवानका भक्त बनकर, कैसी कैसी विपत्तियाँ, कैसा कैसा उपद्रव, कितनी कितनी लांछनाये, तथा कितने भयानक अत्याचार सहन करनेके लिये, तैयार हुआ था, कितनी विड़म्बनाएँ उसे सहन करनी पड़ी थीं, किस तरह वह पहाड़से पटका, आगमें जलाया, हाथीके पैरों तले कुचला, समुद्रमें फका और विष खिलाया गया था—प्रभृति सभी घटनाएँ, सभी लीलाएँ, अद्भुत, अनोखी और अपूर्व उपदेशभरी हैं। इनके पढ़नेसे चित्त दृढ़ होता है, मनमें साहस होता है, हृदय पाप-कर्मसे दूर हटता है, तथा भगवानकी भाव भरी भक्ति हृदयमें जागरित हो जाती है। इसी

कारणसे बालक बालिका, स्त्री पुरुष, छोटे बड़े, सबके पढ़ने और मनन करनेकी यह एक अति आवश्यक सामग्री है। भाषा बड़ा सरल तथा पुस्तक कई चित्रोंसे सुशोभित है। मूल्य ||=)

पंचभूत।

लेखक कवि-सम्राट रवीन्द्रनाथ ठाकुर।

पंचभूत, साहित्य-जगतका देदीप्यमान सूर्य, गद्य-काव्य-कानन-का कुसुमित कुसुम, कहानीके रूपमें अद्भुत विचारों, दार्शनिक तत्वों तथा अध्यात्मिक उक्तियोंका रत्नाकर है। पृथ्वी, जल, अग्नि आकाश और वायुसे किस तरह मानव-शरीरसे लेकर समस्त संसारकी उत्पत्ति होती है, ये इस संसारमें कैसा कैसा खेल दिखाते हैं, इन तत्वोंके क्या कार्य हैं, प्रभृति बातें जानती हों तो इसे पढ़िये। इसमें कहानीके रूपमें सौन्दर्य, स्त्री-पुरुष, गाँव, मनुष्य, मन, अखण्डता, गद्य-काव्य, काव्यका तात्पर्य, प्राञ्जलता, कौतुक-हास्य, कौतुक-हास्यकी मात्रा, सौन्दर्यमें सन्तोष, भद्रताका आदर्श, अपूर्व रामायण, वैज्ञानिक कौतूहल—प्रभृति उच्च विचारोंसे पूर्ण ऐसी कहानियाँ हैं, कि पढ़कर दंग हो जाना पड़ता है। सारांश यह कि आप साधारण उपन्यास-पाठक हों तो पंचभूत पढ़िये, लेखक हों तो पढ़िये, सम्पादक हों तो पढ़िये, दार्शनिक, अध्यात्म-चिन्तक, साहित्यिक—चाहे जो हों, जिस विचारके हों, इसे पढ़िये। इसमें वह आनन्द, वह ज्ञान-विज्ञान मिलेगा, जो आजतक किसी पुस्तकमें दिखाई न दिया है। सुन्दर सजिल्द पुस्तकका मू० १॥)

वारांगना रहस्य ।

यह पुस्तक :साहित्य-जगतका श्रृङ्गार, उपदेशोंका आगार चरित्र सुधारनेका जागता हुआ मन्त्र, स्त्री-पुरुष शिक्षाका स्वतः-सिद्ध तन्त्र और समाजको एक महान विपत्तिसे वचानेवाला अद्भुत ग्रंथ है। सर्वनाशिनी वेश्याओंकी शिक्षा, तालीम, उनके प्रत्येक भेद, पुरुषोंको फंसानेके लिये किस स्थानपर कसे कसे शस्त्रोंका प्रयोग करती हैं, किस इच्छासे क्या भाव वताती हैं, कैसे कैसे दुष्कर्म करनेके लिये सदा तय्यार रहती हैं, जवानीकी अवस्था वीत जानेपर भी कैसे कैसे षड़यन्त्र रचकर अपनी मौज निवाहती हैं, जितना इनमें भेद है उन सवको, एक-देश-प्रेमी वेश्याने अपनी जीवनीमें कहा है। साथ ही सती-साध्वियाँ किस तरह अपने पतिकी रक्षा करती हैं, कैसे विपद्-कालमें क्षण-क्षणमें वे अपना सर्वस्व अर्पण करनेको प्रस्तुत रहती हैं, विलासी, कामी, वेश्यासक्त पुरुषों-की कैसी अवस्था रहती है, विलायती वेश्याएँ अपना जाल किस चातुरीसे फेकती हैं, प्रभृति सभी वातें इसमें लिखी हैं।:यदि आप स्त्री-समाजका वास्तविक दृश्य देखना चाहते हों, यदि वास्तवमें अपनेको, अपने परिवारको और अपने देशभाइयोंको सुखी किया चाहते हों, तो इसे स्वयं पढ़िये, अपने मित्रों और आश्रितोंको पढ़ाइये और यदि आप धनी हैं, ईश्वरने शक्ति दी है तो इसे यथासामर्थ खरीदकर वँटवा दीजिये। आपका मङ्गल होगा, पुण्य होगा और आपके देशभाई एक भारी विपत्तिसागरसे वच जायँगे। सुन्दर चित्रों सहित ६ भागोंका मूल्य ४॥) सजिल्द ५)

अधिक खरीदनेवालेको सस्ती दरमें मिलेगी।

पृथ्वीराज ।

महाराज पृथ्वीराजका शहाबुद्दीनसे अनेकानेक युद्ध, भोलाराय भीमदेवकी कूटनीति, मेवाड़पर आक्रमण, सारुण्डाकी भीषण लड़ाई, आबू पर्वतका युद्ध, दिल्लीके राजा अनङ्गपालका अद्भुत चरित्र, माधव भाटका छल, पृथाकुमारी तथा समरसिंहका विलक्षण प्रेम, शशिव्रता, इच्छनकुमारीका प्रेम, जयचन्दका हठ राजसूय यज्ञ, यज्ञके बाद ही संयोगिताका गायब हो जाना; कालिञ्जरपर चढ़ाई, थानेश्वरमें हिन्दू मुसलमानोंका भयानक युद्ध संयोगिताका प्रेम, रानियोंका पातिव्रत आदि इतनी घटनायें सप्रमाण लिखी गई हैं, कि पढ़कर तबीयत फड़क उठती है, यह पुस्तक प्रत्येक मनुष्यको अवश्य पढ़नी चाहिये। कई चित्रोंसे सुशोभित सुन्दर पुस्तकका मूल्य १।) सजिल्द १॥।)

अभिमन्यु-चरित्र ।

महासभाके जिस छोटेसे वीर बालकने अपने पराक्रमसे बड़े बड़े महारथियोंके छक्के छुड़ा दिये थे। द्रोणाचार्य्य जैसे शस्त्र निपुणने भी जिसकी युद्ध-कलाकी प्रशंसा की थी, जिसने उनका रचा व्यूह भी भङ्ग कर दिया था, यह उसी वीर केशरीका जीवन चरित्र है। मूल्य ।)

उद्भ्रान्त प्रेम ।

इसमें प्रेमकी महिमा, प्रेमका रहस्य, प्रेमकी लीला, प्रमके

साथ ही साथ वैराग्यका उत्पन्न हो जाना ; श्मशानमें, पूर्णिमाका चन्द्र, गङ्गातट, प्राणोंका व्यवसाय, नव-वसन्त, शयन-मन्दिर, आदि ऐसे ऐसे विषय दिये हैं, ऐसी सरल भाषामें प्रेम रहस्य समझाया है, कि पुस्तक पढ़कर लेखकका हाथ चूम लेनेको इच्छा होती। मूल्य ।॥)

नन्दनभवन ।

सावित्री नामकी एक परमा सुन्दरी कन्याका वल्लभदास प्रेममें मुग्ध होना, दुष्टोंका उसको अपने जालमें फसानेकी चेष्टा करना, चन्द्रभागा नामकी एक दूसरी रमणीका भी वल्लभदासपर आसक्त होना, अभिमन्त्रित यन्त्रका फल, प्रेमके कारण एक मनुष्यकी हत्या होना, एक निरपराधीका फसना, वकीलोंकी चालें आदि ऐसी ऐसी घटनाएं लिखी हैं, कि पढ़कर मुग्ध हो जाना पड़ता है। मूल्य ॥=)

भीमसिंह ।

भीमसिंह ऐतिहासिक उपन्यासोंका राजा है। अलाउद्दीनकी चित्तौड़पर बारह चढ़ाइयोंका पूरा पूरा हाल, राणा लक्ष्मणसिंहका बारह राजकुमारोंके साथ प्राणाहुति देना, अलाउद्दीनके वजीरकी कन्या नसीबनका अद्‌भुत रहस्य, बारह वर्षके बालक बादल तथा ६० वर्षके वृद्ध गोराका अद्‌भुत युद्ध-कौशल, राणा भीमसिंहका विलक्षण त्याग, महारानी पद्मिनीका हजारों राजपूत बालाओंके

साथ सती होना आदि ऐसी ऐसी घटनायें लिखी हैं, कि पाठक दङ्ग हो जायँगे। कई सुन्दर चित्रोंसे सुशोभित पुस्तकका मूल्य १॥) सजिल्द २)

सिकन्दरशाह।

जिस वीरने अपनी प्रवल प्रतिभासे थोड़े ही समयमें थोड़ीसी सेनाके साथ ग्रीससे लेकर सुदूर भारतके पञ्जाव प्रदेश तक अपना अधिकार फैला दिया था। यह उसी प्रतिभाशाली युद्धकुशल वीर सिकन्दरका पूरा पूरा जीवन चरित्र है। इसमें ग्रीस देशकी शिक्षा, टायरीका युद्ध, फारिसके राजा दरायुससे भीषण समर, थेवका दमन, डार्डेनैलीसपर चढ़ाई, फेरियाकी भीषण लड़ाई, दाराका पतन अनुपम सुन्दरी दाराकी कन्याका सिकन्दरसे विवाह, सिकन्दरका सैकड़ों स्त्रियोंके वीच रहकर अधःपतन, आम्भीका सिकन्दरकी वश्यता स्वीकार करना, आदि ऐसी ऐसी घटनायें लिखी हैं, कि पढ़ते पढ़ते मुग्ध हो जाना पड़ता है। वड़ी ही सुन्दर सुन्दर कई तस्वीरें भी दी गई हैं। मूल्य १॥=) सजिल्द २=)

महात्मा गान्धी।

जिस महापुरुषने इस समय अपने उद्योगवलसे समस्त भारतको अपना अनुयायी वना लिया है, जिनके असहयोग आन्दोलनकी गूँज देश देशान्तरोंमें गूँज रही है, जिनके अद्भुत आत्मवल और देश-

सेवाको देख जगत चकित हो रहा हैं। यह उसी परमत्यागी महात्माका पूरा पूरा जीवन-चरित है। हिन्दीमें इस जोड़की दूसरी जीवनी नहीं है, क्योंकि इसमें बाल्य जीवन, विदेश-अफ्रिकाके कार्य, आफ्रिकामें सत्याग्रह, रणभेरी, ट्रान्स-वालपर चढ़ाई, सत्याग्रहका आरम्भ, त्याग, भारतागमन, आदर्श स्थापन, खेड़ेका आन्दोलन, चम्पारनकी घटना, भारतमें सत्याग्रह, पञ्जाबका काण्ड, ड्यूकके नाम चिट्ठी तथा भारतके बड़े लाट लार्ड रीडिङ्गसे भेट प्रभृति समस्त घटनायें लिखी हैं। ऊपर महात्माजीकी दिव्य तस्वीर है। दाम १)

अंगरेजी शिक्षावली—

विना उस्तादके अँगरेजी सिखानेवाली ऐसी कोई पुस्तक आजतक नहीं वनी। आप इसको लेकर इसके सहारे विना परिश्रमके इतनी अँगरेजी सीख जायँगे, कि रेल, तार, डाक वगैरहके सब काम चला लेंगे, यहाँतक कि आपको अच्छी तौर पर अँगरेजीकी पूरी ल्याकत हो जायगी। अन्य समस्त पुस्तकोंसे इसमें विशेष सुविधा यह है, कि इसमें अँगरेजी व्याकरण भी अच्छी तरह समझा दिया गया है। इसमें सब प्रकारके जीव, फल, मनुष्य, व्यापारी, कारबार, धातु, कामके शब्द, व्यापारी शब्द, तार लिखनेके शब्द, चिट्ठियोंके कायदे आदि सभी बातें दे दी गई हैं। मूल्य सादी १)
सजिल्द १॥)

दाम्पत्य-विज्ञान।

हिन्दी साहित्य क्षेत्रमें यह विलकुल नयी, अपने ढंगके निराली और एकदम अनूठी पुस्तक है। बालक बालिकायें किशोरावस्था अतिक्रमण कर किस तरह यौवनावस्थामें प्रवेश करती हैं, उस समय उनके मनोभाव कैसे रहते हैं, स्त्रियाँ पुरुषोंके लिये और पुरुष स्त्रियोंके लिये किस प्रकार व्याकुल हो उठते हैं, दाम्पत्य जीवनमें पदार्पण करनेके लिये कितने उत्सुक रहते हैं—प्रभृति बातोंका बड़े ही रोचक शब्दोंमें वर्णन किया गया है। हस्त मैथुन नोष और अति-विहार प्रभृति क्या हैं और उनका क्या परिणाम होता अन्तमें सहवास किंवा गर्भाधान, ऋतुकाल, प्रभृति स्वाभाविक कर्म करते हुए भी मनुष्य किस तरह दीर्घायु हृष्टपुष्ट और उत्तम सन्तान उत्पन्न कर सकता है इस पुस्तक सभी बताया गया है। आबाल वृद्ध वनिता-सबके लिये एक समान उपयोगी है। नवयुवक और नवदम्पतियोंको तो इसे सदैव अपने पास रखना चाहिये। इससे उनका जीवन सरस हो सकता है, उनकी गृहस्थी सोनेकी बन सकती है और इस दुःखमय संसारमें ही स्वर्गका दृश्य उपस्थित किया जा सकता। सुन्दर सुनहली जिल्द सहित मोटे एन्टिक पेपर पर छपी हुई दलदार पुस्तकका मूल्य केवल २) रुपये।

पुस्तक मिलनेके पते।

कलकत्ता—प्रकाशक, १२।१ चोरबगान लेन।

पाठक एण्ड कम्पनी, १२।१ चोरबगान लेन।

ललित प्रेस, १७।A मदनमित्र लेन,

'मतवाला' कार्यालय, २३, शंकरघोष लेन,

निहालचन्द एण्ड को, १ नारायणप्रसाद बाबू लेन

हिन्दी पुस्तक एजन्सी, १२६ हरीसन रोड

हिन्दी साहित्य भवन, कुकबिल्डिंग, हरीसन रोड

वेङ्कटेश्वर बुकडिपो, हरीसन रोड

वनारस—लहरी बुकडिपो-बुलानाला

उपन्यास वहार आफिस राजघाट

मनमोहन पुस्तकालय, नीचीबाग

वनारसी प्रसाद बुकसेलर, कचौड़ी गली

मास्टर खिलाड़ीलाल संस्कृत बुकडिपो

भार्गव बुकडिपो, चौक

हिन्दी साहित्य मन्दिर, चौक

लखनऊ—गंगापुस्तकमाला कार्यालय, २९-३० अमीनाबाद

पटनाजंक्शन—सरस्वती भण्डार,

राजेश्वरी प्रसाद बुकसेलर

कन्हैयालाल बुकसेलर चौक-पटना सिटी

मुंगेर—गोविन्दप्रसाद एण्ड सन्स
मिश्रीलाल बुकसेलर
भागलपुर—शिवजतन पाण्डेय
लहरिया सराय—हिन्दी पुस्तक भण्डार
दरभङ्गा—कन्हैयालाल कृष्णदास बुकसेलर
मुजफ्फरपुर—वर्मन कम्पनी, पुरानी बाजार
मथुरा—बाबू किशनलाल, बम्बई भूषण प्रेस
श्यामलाल हीरालाल, श्यामकाशी प्रेस
फेरड एण्ड कम्पनी
क्षेत्रपाल शर्मा, सुख सञ्चारक कम्पनी
गया—रामसहाय लाल बुकसेलर
एलाहाबाद—साहित्योदय पुस्तकालय।
इलाहाबाद—साहित्य भवन लिमिटेड
चाँद कार्यालय
साहित्य सदन
राष्ट्रीय सदन
गोरखपुर—हनुमानदास गयाप्रसाद
मथुराप्रसाद किशनचन्द, रेतीचौक
आगरा—आर्यसाहित्य पुस्तकालय, फुलट्टो बजार
कन्यालाल एण्ड सन्स
साहित्यरत्न भाण्डार
बाबूराम गुप्त ओ० जे० प्रेस

दिल्ली—नारायणदास जंगलीमल

इम्पीरियल बुकडिपो

जगन्नाथ लक्ष्मीनारायण, बड़ादरीबा

बरेली—राधेश्याम कथावाचक

जे० के० एण्ड सन्स

आर्यग्रन्थ रत्नाकर

शाहजहाँपुर—बद्रीप्रसाद मुरलीधर, बहादुरगञ्ज

इन्द्रजीत लक्ष्मीधर आर्य बुकसेलर

कानपुर—चुन्नीलाल गौड़, गौड़ पुस्तकालय चौक

प्रकाश पुस्तकालय; फीलखाना

झांसी—गौरी शंकर ब्रदर्स, इयर गेट

अमृतसर—रामदास रामदेव पशम बाजार

तीरथराम जोशी

लाहौर—लाजपतराय पृथ्वीराज साहानी, लाहौरी गेट

नारायणदास सहगल एण्ड सन्स

राजपाल, आर्य पुस्तकालय सरस्वती आश्रम

मोतीलाल बनारसीदास सैद मीठा बाजार

जे० एस० सन्तसिंह एण्ड सन्स

मेहरदास लक्ष्मणचन्द बुकसेलर

पिण्डीदास बुकसेलर, ग्वालमण्डी

पुरी ब्रदर्स, कचहरी रोड़

मिर्ज़ापुर—[illegible]त्तराम बुकसेलर, ढुंढी कटरा

जबलपुर—मिश्र बन्धु कार्यालय

लोकमान्य पुस्तक भण्डार

बम्बई—हिन्दीग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय

गान्धी हिन्दी पुस्तक भण्डार, कालबादेवी रोड़

आरा—सहदेव प्रसाद बुकसेलर बाबू बजार

सीकर—बाबू हरदत्तराय सिंहानिया, रामगढ़

गुजराँवाला—हरनाम पुस्तकालय, महरायां वाली गली

शिमला—कालीचरण स्टोर्स

हरिद्वार—सरस्वती पुस्तकालय कनखल

चस्ता—पं० काशीनाथ सरजूप्रसाद

सहारनपुर—सर्व हितैषी व्यापार मण्डल

बड़ौदा—महेन्द्र प्रताप कम्पनी, कारेली बाग

जयदेव ब्रदर्स

हरदोई—दीन दयाल मिश्र

बाँसवाड़ा—लक्ष्मणदास जानकीदास वैरागी सद्धर्म वर्धक पुस्तकालय।